सिंह परिवार

मनोहरदास चतुर्वेदी

73

INDIAN INSTITUTE OF ADVANCED STUDY
Acc. No. 24502
Date 14.5.68
SIMLA.

Library IIAS, Shimla
H 639.5 C 392 S
24502

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया
नई दिल्ली

मार्च १९६८ (चैत्र १८९०)

© मनोहरदास चतुर्वेदी, १९६८

मूल्य : ३.००

639.6
C3925

सचिव नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया, २३ निजामुद्दीन ईस्ट, नई दिल्ली-१३, द्वारा प्रकाशित तथा नवीन प्रेस, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६ द्वारा मुद्रित।

लेखक की भूमिका

दरिन्दों में सबसे बड़ा कुनबा बिल्ली मौसी का ही है। चाल-ढाल, रहन-सहन, खाना-पीना, सूरत-सीरत में इस बिरादरी के सभी जानवर एक-दूसरे से मिलते-जुलते हैं। देखने में बिल्ली चाहे छोटी हो, पर अय्यारी व मक्कारी में किसी से कम खोटी नहीं। बिल्ली मौसी के परिवार में वैसे तो बहुत जानवर हैं, मगर इनमें से जो मुख्य मुख्य जानवर हमारे देश में पाए जाते हैं, उनका वर्णन यहाँ किया गया है।

इससे पहले इन जानवरों की कहानी धारावाहिक रूप में 'सरस्वती' में निकल चुकी है। यह पुस्तक उन्हीं कहानियों के आधार पर है।

छोटी-बड़ी बिल्लियों के साथ भारत और विशेष तौर पर उत्तर-प्रदेश के वनों में मैंने अपने जीवन के ३० वर्ष बिताए। इन जानवरों की यह कहानी एक शिकारी के ज़बानी नहीं, बल्कि इनके पुजारी के ज़बानी है। यह कहानियाँ लिखते समय मेरे कान में अक्सर यही आवाज़ आती रही :

मज़ा जब था, जो वह सुनते मुझी से दास्ता मेरी,
कहाँ से लाएगा क़ासिद बयां मेरा, ज़बां मेरी।

मेरी पाठकों से बस यह प्रार्थना है कि यदि कभी अवसर मिले तो इन जानवरों की कहानी इन्हीं के ज़बानी भी सुनें।

देहरादून
जनवरी, १९६८

मनोहरदास चतुर्वेदी

विषय-सूची

	पृष्ठ
१. बाघ या धारीदार शेर	६
२. सिंह	५०
३. गुल्दार या तेन्दुआ	५६
४. चीता	७१
५. घरेलू वा जंगली बिल्ली	७५
६. लकड़-बग्घा	७८

१. बाघ या धारीदार शेर

जब कभी भारतवर्ष की चर्चा अन्य देशों में चलती है, तो लोग शेर, हाथी, आम और गांधीजी का नाम एक ही साँस में ले लेते हैं। शेर के ऊपर विदेशी भाषाओं में अनेक किताबें लिखी गई हैं। सच पूछो तो शेर भारत के बाहर ही अधिक मशहूर है।

हमारे देश में शेर के नाम ही से लोगों के रोंगटे खड़े हो जाते हैं। वैसे तो शेर के बारे में बहुतेरी दन्तकथाएँ गाँव-गाँव में सुनने में आती हैं, मगर उसकी शक्ल-सूरत शायद ही कोई सही-सही बता सके। देहातियों की तो कौन कहे, पढ़े-लिखे लोग तक शेर के बारे में धोखा खा जाते हैं। मुझे अब तक याद है कि ग्रामसुधार की पत्रिका 'हल' में मेरी शेर की एक कहानी के साथ, उसके विद्वान सम्पादक जी ने तस्वीर गुल्दार की लगा दी। यही नहीं, इस कहानी के सैकड़ों पढ़नेवालों में से किसी का भी ध्यान ऐसी भारी भूल पर नहीं गया।

अक्सर लोग सिंह, केसरी, केहरी, बबर, नाहर, गुल्दार, चीता, बाघ, बघटा, बगहा, गुलबगहा, लकड़-बग्घा सभी को एक ही नाम 'शेर' से पुकारते हैं। शेर के बारे में ऐसी-ऐसी बातें गढ़ी गई हैं, कि जिनका न सिर है न पैर। भूत, प्रेत, दाना, राक्षस व शेर लोगों के ध्यान में एक ही साथ आते और उन्हें भयभीत करते हैं।

इस देश में शेर के समान जगत-प्रसिद्ध जानवर के बारे में ऐसा आश्चर्य-जनक अज्ञान होने के कई कारण हैं। पहले तो शेर अब रह ही इतने थोड़े गए हैं कि कहीं-कहीं ही घने जंगलों में मिलते हैं। फिर शेर दिन में आँखों से ऐसा ओझल रहता है कि इसके दर्शन दुर्लभ हैं। जनता को पड़ोस में शेर के होने का सबूत केवल उसके मारे हुए जानवरों से मिलता है। डर के मारे लोग शेर से कोसों दूर भागते हैं, फिर उसे निहत्था देखने कौन जाए?

शिकारियों ने पिछले २०० वर्षों में शेर को नेस्ती के घाट पर पहुँचा दिया है। अगर यही हाल रहा, तो शेर अब थोड़े ही दिनों का मेहमान है। शेर की हस्ती मिट रही है, उसका नाम मिट्टी में मिल रहा है।

सूरत-शकल

इस शेर का शरीर सुनहरा और उस पर काली धारी रहती हैं। संस्कृत में इस शेर को व्याघ्र कहते हैं। इसी से इसका नाम बाघ पड़ा। यह शेर पश्चिमी भारत (राजस्थान-पंजाब) को छोड़कर समस्त भारत में पाया जाता है।

शेर का विस्तार

शेर केवल एशिया में ही पाया जाता है। अफ्रीका में जहाँ सिंह, गुल्दार तथा अन्य बहुतेरे जानवर होते हैं, शेर नहीं होता। उत्तरी व दक्षिणी अमरीका, व आस्ट्रेलिया में भी शेर नहीं पाया जाता।

एशिया के पश्चिमी हिस्से में भी शेर नहीं पहुँचा। पंजाब, राजस्थान, पश्चिमी पाकिस्तान, खुश्क व खाकीन अरब, इराक इत्यादि भी शेरों से खाली हैं। कहा जाता है कि शेर उत्तरी रूस में ही पला और बढ़ा। वहाँ से यह पूर्व की ओर फैला और मनचूरिया, कोरिया, चीन, वर्मा, सियाम (थाईलैण्ड), वियतनाम, मलाया, जावा, सुमात्रा व बाली तक पहुँच गया। बर्मा ही से शेर भारतवर्ष में पहुँचा और सारे देश में फैल गया। शेर लंका में नहीं पाया जाता। इससे जान पड़ता है कि लंका, शेर के आने से पहले ही, भारत से अलग हो चुकी थी।

जावा, सुमात्रा व बाली में शेर के होने से यह सिद्ध है कि ये द्वीप पहले मलाया से मिले हुए थे। शेर की पश्चिमी शाखा कोह्-काफ, केस्पियन सागर, उत्तरी ईरान तक पहुँची।

भारतवर्ष में शेर असम की ओर से आया और चारों तरफ फैल गया। असम, बंगाल, हिमालय की तराई, मध्य भारत तथा समस्त दक्षिण के जंगलों में शेर ने अपना डेरा जमा लिया। नदी-नालों में, घोर जंगलों में, घाटियों व गुफाओं में, शिवालिक के वनों में, प्रायः सभी जगहों में शेर पाया जाता है। हिमालय में ७-८ हज़ार फुट की ऊँचाई तक शेर पहुँच जाता है। चकराते के पास देवबन से थोड़ी ही दूर मनडाली में, बी० बी० ओसमेस्टन ने १८८९ में एक नरभक्षी शेरनी, लगभग १०,००० फुट ऊँचाई पर मारी थी।

यह तो बताना कठिन है कि शेर भारतवर्ष में कब पहुँचा। परन्तु संस्कृत में शेर के लिए व्याघ्र शब्द का होना यह सिद्ध करता है कि आर्य लोग शेर से

अपरिचित न थे। पिछले दिनों में मोहनजोदरो तथा हड़प्पा की प्राचीन सभ्यता के अनुसंधान के लिए, जो खुदाई हुई, उसमें उस युग की मोहरों में शेर की छाप[1] से यह पता चलता है कि शेर से यह प्राचीन सभ्यता अनभिज्ञ न थी। हम पहले कह चुके हैं कि पंजाब व पश्चिमी भारत में शेर नहीं पाया जाता। आर्यावर्त्त में शेर का न होना, और सिंह का जगह-जगह खुले मैदानों में मिलना, यह बताता है कि सिंह की इतनी चर्चा हमारे शास्त्रों, पुस्तकों और मन्दिरों में क्यों है। शेर अधिकतर पूर्वी भारत का जानवर है, इसलिए गौतम बुद्ध शेर से खूब परिचित थे। बौद्ध साहित्य में बाघ (शेर) का काफी उल्लेख मिलता है। बहुत से स्थानों का नाम बाघ पर पड़ा है। जैसे, बाघौली, बाघघरी, बघाइया इत्यादि। ऋग्वेद में व्याघ्रपद के मंत्र हैं। महाभारत में नल-दमयन्ती की कहानी में व्याघ्र का ज़िक्र है। धर्मशास्त्र में लिखा है :

(१) द्विज को चाहिए कि जैसे भी हो गाय को डाकू और व्याघ्र से बचाए।

(२) घोड़े का चोर, व्याघ्र का जन्म लेगा।

जातकों में कथा है कि, बोधिसत्व ने एक बार व्याघ्रयोनि में जन्म लिया था। किसी अन्य जन्म में उन्होंने अपना शरीर एक भूखी शेरनी को भेंट कर दिया था। छत्रपति शिवाजी के बाघ-नख, जिनसे उन्होंने अफज़ल खाँ पर आक्रमण किया था, तो ऐतिहासिक हो चुके हैं।

शेर की जातियाँ

रहन-सहन की जगह तथा जलवायु के प्रभाव से मनुष्य जाति की तरह, शेर की जाति में भी थोड़ा-बहुत अन्तर हो जाना कोई आश्चर्य की बात नहीं। विचार करने योग्य बात यह है कि शेर एक ऐसा जानवर है जो मंचूरिया की ठंड, मध्य भारत की गरमी, हिमालय की उमस भरी तराई, केरल की बारिश इत्यादि में प्रसन्नता से जीवन व्यतीत करता है। उत्तराखंड की बर्फ, तराई का कीचड़, सुन्दरवन का खारी पानी और असम का मूसलाधार मेह—शेर के लिए सब बराबर हैं। शेर की खास-खास जातियाँ निम्नलिखित हैं :

---

१. राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली।

(१) मंचूरिया-कोरिया का शेर

यह और सब शेरों से बड़ा, भारी, गठा हुआ होता है। ठंड व बर्फ से बचाव के लिए इसके बाल बड़े होते हैं जिसके कारण काली धारियाँ धुंधली दिखाई पड़ती हैं।

(२) कैस्पियन सागर का शेर

कैस्पियन सागर, कोहकाफ (कॉकेशस) और उत्तरी ईरान का शेर भारतीय शेर से मिलता-जुलता है। इसके बाल छोटे और कड़े होते हैं।

(३) भारतीय शेर

इसे बंगाल का शाही शेर (रायल बंगाल टाइगर) इसलिए कहते हैं कि ईस्ट इंडिया कम्पनी के अंग्रेज़ शिकारियों की सबसे पहली मुठभेड़ इस शेर से बंगाल में हुई।

(४) जावा-सुमात्रा का शेर

जावा-सुमात्रा-बाली के शेर छोटे और चटकीले रंग के होते हैं। इनके चेहरे की सफेदी में और शेरों से अन्तर रहता है। याद रखने की बात यह है कि मंचूरिया के शेर को छोड़कर, और शेरों में कोई बड़ा भारी भेद नहीं होता।

शेर का रंग व धारी

शेर के शरीर का रंग सुनहरी-ऊँटिया होता है। उस पर रीढ़ की हड्डी से पेट की गोलाई लिए हुए, पसलियों के ऊपर काली धारी पड़ी रहती है। यह धारियाँ नीचे की ओर हल्की पड़ जाती हैं। धूप से बचे रहने के कारण उसका पेट और छाती सफेद होती है। धारियों का रंग गहरे कत्थई से लेकर काला तक रहता है। बचपन में शेर के बाल झबरे, और उसका रंग हल्का रहता है। जवानी में शरीर का रंग गहरा हो जाता है और मादा हमेशा नर के रंग से ज़्यादा चटकीली होती है। जाड़ों में शेरों की खाल पर मोटे बाल आ जाते हैं और रंग गहरा हो जाता है। गर्मियों में बाल गिर जाते हैं और धारियों का रंग फीका पड़ जाता है। मूँछों के बाल सफेद व सख्त होते हैं। शेर के मुँह पर काफी सफेदी रहती है। नरों के गलगुच्छे झबरे व सफेद होते

हैं। शेरों के कानों के किनारे काले, और उनके पीछे सफेद धब्बे पड़े होते हैं। ज्यों-ज्यों उम्र बढ़ती जाती है, धारियाँ हल्की, कम और दूर-दूर होती जाती हैं। कुछ शेरों के आगे के हिस्से में कम धारियाँ होती हैं।

शेर का ऐसा रँगा-पुता होना बेमतलब नहीं है। शेर झाड़ियों, लम्बी घास, नरकुल या बेंत के झाड़ों में और पेड़ों के नीचे दुबक कर बैठता है। उसके सूखी घास की तरह रंग पर, धारियाँ पेड़ों की शाखों की छाया में मिलकर ऐसी एकाकार हो जाती है कि जंगल में बैठा शेर आपको दस गज से दिखाई न देगा। शेर का रंग व धारी उसे अपने-आपको छिपाने में मदद करते हैं। शेर अपने शिकार को झटक कर हाथ से पकड़ता है। यदि वह जानवरों से छिपकर न चल-फिर सके तो भूखा ही मर जाए।

गर्मियों में सूखे सुनहरे पत्ते व काली सूखी डालियाँ शेर के रंग व धारियों में मिल जाती हैं। शिकारियों को जगह-जगह शेर दिखाई देने लगते हैं। पीलीभीत के जंगलों में, एक शिकारी ने एक मरी भैंस की हड्डियों की ठठरी पर एक नहीं बल्कि तीन गोलियाँ चला दीं और घंटों पेड़ पर परेशान बैठे रहे कि कहीं घायल शेर हमला न कर बैठे।

एक बार, मैं हाथी पर सवार एक जख्मी शेर को मुस्तफाबाद के पास पीलीभीत के जंगलों में ढूंढ़ रहा था। हाथी पर हम लोग चार आदमी थे। चारों की शेर के ऊपर आँखें थीं। हम लोगों को शेर तभी दिखाई दिया जब कि वह एक झाड़ी से कूदकर हाथी के सिर पर आ कूदा। ऐसी हालत में शेर पर गोली चलाना ठीक न था क्योंकि डर यह था कि गोली कहीं हाथी के न लग जाए। हवाई फैर करके हाथी को शेर से बड़ी मुश्किल से बचाया।

शेर का रंगीन शरीर, उसको शिकारियों और जंगली जानवरों की आँख से घने जंगल में ओझल रखता है, खुले मैदान में नहीं।

रीवा के पास एक सफेद शेर की नसल पाई गई है। इस नसल के कई शेर चिड़ियाघरों में भी पैदा हुए हैं। सफेद शेर का शरीर मटमैला सफेद होता है और उस पर धारियाँ कत्थई रंग की होती हैं। पुराने ज़माने में नर्मदा नदी के निकास के जंगल में, बिलासपुर, मंडला, कूच बिहार, उड़ीसा और भागलपुर में, गिने-चुने सफेद शेर मारे गए थे। दो सफेद खालें लंदन के केनसिंग्टन अजायबघर में थीं। आजकल सफेद शेर कई चिड़ियाघरों में हैं।

बकलैंड ने एक बिलकुल काले शेर का भी हाल, जो उन्होंने चिटगाँव में देखा था, 'फील्ड' नामक पत्रिका में १८८१ में लिखा था। पर इसका कोई भरोसा नहीं क्योंकि काला शेर न तो आज तक मारा गया, न पकड़ा गया।

शेर का रहन-सहन

डील-डौल में तो नहीं, पर और सब बातों में शेर अपनी मौसी बिल्ली से मिलता है। घर-घर म्याऊँ करने वाली बिल्ली, शेर की, एक छोटे पैमाने पर सही, सच्ची व जीती-जागती नकल है। शरीर की बनावट, इकहरा, छरहरा बदन, नज़ाकत, अय्यारी, गोश्त-खोरी, वे-आहट चाल, दिन भर सोना, रात भर घूमना, उस्तरे की तरह तेज़ ज़बान, चौकन्ने कान, गद्दीदार पंजे, मुंह पर मूंछें, तेज आँख, स्वाधीनता, ओझल रहना, चाट-चाटकर शरीर की सफाई और आन पड़ने पर बिजली की सी झपट, यह सब बातें ऐसी हैं, जो बिल्ली ने ही शेर को सिखाई जान पड़ती हैं।

कहावत है कि बिल्ली ने शेर को सब बातें सिखाई, बस एक पेड़ पर चढ़ना नहीं बताया। शेर गुल्दार की तरह तो पेड़ पर आसानी से नहीं चढ़ सकता पर आन पड़ने पर चढ़ने में चूकता भी नहीं है। सिमसन ने, पुरनिया ज़िले में, बाढ़ के समय, शेरों को टीलों और पेड़ों पर चढ़े देखा था। एक बार महानदी के किनारे एक पीपल के पेड़ पर एक शेर २५ फ़ुट ऊँचा बैठा मिला था।

ज्वालासाल (हलद्वानी) में, एक घायल शेर ने मिसेज़ स्मथीज़ पर, जो पेड़ पर १४ फ़ुट ऊँचे मचान पर बैठी थी, छलाँग मारकर हमला किया। मेम साहब मचान से गिर पड़ीं, और यदि उनके पति ठीक उसी समय वहाँ पहुँचकर शेर को गोली से न मार देते, तो मेम साहब की जान ही चली गई थी। शेरों की पेड़ों पर चढ़ने की बहुत सी और मिसालें हैं।

बिल्ली और गुल्दार दोनों ही पानी से घबराते हैं पर शेर गर्मियों में बड़े चाव से पानी में पड़ा रहता है। हिमालय की तराई में शेर दिन-रात पानी और कीचड़ में गौंद की तलाश में घूमते-फिरते हैं। शेर बड़ी अच्छी तरह तैर लेता है। पीलीभीत के जंगलों में १९४२ में, एक शेर कटरे की लाश को मुंह में लेकर शारदा की तेज बहती हुई नहर को पार कर गया था। गंगा के मुहाने

पर, सुन्दरवन में, शेर दिन-रात पानी में तैरकर टापू-टापू घूमते-फिरते हैं। नैपाल के शेर बहुधा शारदा को पार कर हमारे जंगलों में आ जाते हैं। ढेला (रामनगर) में तो एक शेर ने कटरे की लाश पानी के अन्दर ही जा दुबकाई थी।

बिल्ली का सारा कुनबा सफाई के लिए प्रसिद्ध है। शेर अपने को चाट-चाटकर साफ-सुथरा रखता है। यदि उसके बदन में बू न रहे, तो शेर को शिकार करने में सुभीता होता है। शेर, बिल्ली की तरह, अपने नाखूनों को पंजों की गद्दी में खींचकर रखता है। कभी-कभी पेड़ों को खरोंच कर इन नाखूनों को तेज़ करता है। शेर के खरोंचे पेड़ अकसर जंगलों में मिलते हैं। (शेर जहाँ पेशाब इत्यादि करता है, वहाँ अपने पंजों से लेकर मिट्टी डाल देता है)।

शेर कान का बड़ा पक्का होता है। हल्की-से-हल्की आवाज़ दूर से सुन लेता है। दौली के पास एक शेर अपनी मारी हुई लाश के पास इसलिए नहीं आता था कि कुंवर अजैतशत्रु मचान पर बैठे किताब पढ़ रहे थे, और शेर किताब के सफे लौटने की आहट दूर से ले लेता था। कहावत है: हवा भर हुआ खटका और शेर खसका। अपनी मारी व छिपाई हुई लाश छोड़ कर शेर भूखा चला जाएगा, पर खटके के पास नहीं आएगा।

शेर की कंजी आँखें दिन में मिची रहती हैं। अक्सर दिन में शेर सोता ही रहता है। दिन छिपे जब शेर उठता है, तो आँख की बड़ी काली गोल पुतली अच्छी तरह खुल जाती है। शेर रात में भली प्रकार देख सकता है। इसकी आँखें बिजली की रोशनी पड़ने पर जलते हुए लाल अंगारों की तरह दहकती हैं।

वैसे तो मुझे सुरई (पीलीभीत) के पास एक बार दिनदहाड़े शेर मिला, मगर साधारणतः शेर शाम को, जब हाथ की लकीरें न दिखाई दें, तभी उठता है। धोलखंड (सहारनपुर) के पास एक बार एक शेर ने एक बैल कोई ४ बजे ही दिन ढले मार लिया था।

शेर की नाक, कुत्ते, लोमड़ी व भेड़ियों के समान तेज़ नहीं होती। जंगलों में रहनेवालों का कहना है कि परमात्मा ने यदि शेर को कान की तरह 'नाक' भी दी होती, तो दुनिया में शेर ही शेर होते।

शेर के कान, आँख व नाक में ७:५:३ का अन्तर है। इसके यह मानी नहीं हैं कि शेर में सूंघने की शक्ति ही न हो। शेर की 'नाक' आदमी की 'नाक' से

कहीं ज़्यादा तेज़ होती है। शेर सूंघकर ही अपनी छिपाई हुई लाश को अँधेरे में ढूंढ लेता है।

शेर बहुत छिपकर शिकार खेलता है। शेर तभी दहाड़ता है, जब या तो नर-मादा एक-दूसरे को बुलाएँ या मादा शिकार पर बच्चों को बुलाए।

शेर कहीं भी हो, सबसे ऊँची जगह पर जाकर बैठेगा। सहारनपुर के शिवालिक के पहाड़ी जंगलों में शेर अक्सर टीलों की चोटियों ही पर दिन में जाड़ों में धूप सेकते हैं। गर्मियों में नालों के किनारे शेर का डेरा रहता है। इन ठंडे नालों में घनी झाड़ियाँ, नरकुल व बेंत शेर को छिपाने में मदद देते हैं।

शेर की खामोशी, ओझलपन, ज़रा से खटके पर खसक जाना, रोशनी व शोर से बचना—ये सब बातें ऐसी हैं जो शेर की भलमनसाहत का परिचय देतीं हैं। आज तक कभी किसी शेर ने किसी आदमी पर बिना कारण हमला नहीं किया। हाँ, बच्चोंवाली माँ, जो किसी को बच्चों के पास नहीं फटकने देती, और घायल शेर की बात दूसरी है। मुझे एक-दो बार शेर जंगल में पैदल घूमते मिले। मुझे देखते ही उन्होंने अपनी राह ली। मोहंड (सहारनपुर) के पास एक दिन शाम को मेरी पत्नी मेरे चपरासी के साथ घूमने जा रही थी। एक शेर सिर झुकाए जंगल में से निकलकर थोड़ी दूर तक आगे-आगे सड़क पर चलता रहा। जब उसे इन दोनों का खटका मिला, तो दूसरी ओर के जंगल में, बिना कुछ कहे, चला गया।

शेर बेमतलब झगड़े में नहीं पड़ता। धारवाड़ में कर्नल कैम्पबैल ने दो पालतू शेरों की एक भैंसे से लड़ाई कराई। शेर इधर-उधर दुबकते ही रहे और भैंसा उन्हें गेंद की तरह फेंकता रहा। मगर टनकपुर (पीलीभीत) के पास शारदा नदी की रौखड़ में दो शेरों ने एक जंगली नर हाथी को मार दिया, और खुद भी जान दे दी।

कुछ शिकारियों का कहना है कि शेर मामूली तौर पर गीदड़ से भी ज़्यादा बोदा होता है। घायल होने पर शेर, शेर होता है। छोटे-छोटे चरवाहे अपने मवेशियों को शोर मचाकर शेर से बचा लेते हैं।

शेर को देखकर प्रायः सभी जानवर शोर मचाकर एक-दूसरे को खतरे से सावधान करते हैं। चीतल, सांभर व जंगल का चौकीदार काकड़, शेर पर ऐसी आवाजें कसते हैं कि वह सिर पर पैर रख भागता ही दिखाई देता है। मेरे

सामने एक छोटे चीतल के बच्चे ने शेर को देख, अपनी पूंछ ऊँची कर ऐसा शोर मचाया कि शेर भागता ही नज़र आया। जानवरों की तो कहे कौन, मुर्गी, मोर और दूसरी चिड़ियां भी, जिनको शेर नहीं पकड़ सकता, उसको देखते ही आपे से बाहर हो जाते हैं। लंगूर और बन्दर उसे देखते ही सारा जंगल सिर पर उठा लेते हैं। आश्चर्य की बात यह है कि शेर को देखकर सारे जंगल के जानवर शोर तो अवश्य मचाते हैं, पर भागता कोई नहीं; यदि भागता है तो शेर। एक बार मचान पर बैठा मैं चूका (पीलीभीत) के पास शेर की राह देख रहा था। सामने शेर की मारी लाश पड़ी थी। क्या देखता हूं कि एक चीतल और उसका बच्चा दोनों फूंक-फूंक कर पैर रखते, और पैर से खटका करते, आए और चले गए।

सुअर तो शेर का मुकाबला भी कर बैठता है। भैंस अकसर अपने को शेर से छुटाकर भाग आती है। एक बार मोरघटी (कालागढ़) पर मैंने शेर से लड़ कर लौटी हुई एक भैंस देखी। उसकी गरदन पर खून ही खून था। भैंस तो ऐसा ढीठ जानवर है कि अक्सर दस-बीस भैंसे मिलकर और हाँका करके शिकारी लोग घायल शेर को जंगल में घेर लेते हैं। पीलीभीत में मेरा शिकारी पूरन तो एक भैंस के बच्चे को अपने आगे रख शेर के पास तक पहुँच जाता था।

शेर आग व रोशनी से अक्सर बिदकता है, मगर हमेशा नहीं। एक बार शेर ने अपनी मारी व दुबकाई लाश पर जो लालटेन रख दी गई थी, पंजा मार-कर बुझा दी। टिक्करपारा (उड़ीसा) में शेर पर गोली चलाने के बाद, जंगल के रहनेवाले लोग सूखे बाँसों की मशाल जलाकर बाहर निकाल लाए। स्मथीज़ ने भवाली (नैनीताल) के पास एक आदमखोर शेर, लालटेन लाश पर रखकर मारा था। टिनेसिरिम में, शैट्रिज के सामने से शेर अपनी मारी हुई लाश, दो लालटेनों की रोशनी में से भी खींच ले गया। मलाया और जावा में शिकारी अकसर शेर की लाश पर धीमी रोशनी लटका कर बैठते हैं।

आदमखोर शेर तो आग और रोशनी को देख, उल्टे आदमी ढूंढ़ने आते हैं। सागर द्वीप में डासन और मनरो को शेर आग के पास से खींच ले गए थे। बात असली यह है कि आग के भरोसे शेर से बचाव करने का प्रयत्न ठीक नहीं।

शेर अपने को छिपाकर धीरे-धीरे जंगल में चलता है। शेर अपने पंजों पर नहीं, बल्कि उंगलियों के बल, लगभग ३ फुट की डग लेता हुआ, शिकार की

तलाश में घूमता है। शेर के आगे के पैरों में पाँच, और पीछे के पंजों में चार उंगलियाँ होती हैं। आगे की टांगे पिछली टांगों से छोटी होती हैं और उसे पहाड़ से उतरने में तकलीफ़ होती है। इसलिए शेर को पहाड़ से उतार में ही ढूँढ़ना चाहिए, चढ़ाव पर नहीं। शेर के पग-निशान उसको ढूँढ़ने में बड़े काम आते हैं। मैं हमेशा, पग-निशान का नाप जेब में रखता था। मोरघटी (काला-गढ़) के पास, एक घायल शेर को पग-निशान ही से पीछा कर, मैंने एक पहाड़ी टीले पर मारा। पग-नाप से शेर का डील डौल, व नर है या मादा, इसका अच्छी तरह पता चल जाता है। शेर का पिछला पग आगे के पग से छोटा और कम गोलाई लिए होता है। कभी-कभी तो पिछला पग आगे के पग में ऐसा पड़ता है कि मालूम होता है कि कोई दो पैर का जानवर आ रहा हो। शेर के पंजों में ऐसी मुलायम गद्दी होती है कि उसके चलने-फिरने का खटका बिलकुल सुनाई नहीं देता। पीलीभीत में एक शेर का सूखे साल के पत्तों में होता हुआ आना तब सुनाई दिया जब वह ढाल से उतरा।

शेर दिन-भर में शायद ही एक-दो घंटे गहरी नींद सोता हो। यदि पेट अच्छी तरह भरा हो, तो उसे सिवाय अपने पंजों पर सिर रखकर सोने के और कुछ नहीं सूझता।

शेर की पूँछ दाएँ-बाएँ उत्सुकता में हिलती रहती है। गुस्से में व खुशी में पूँछ सीधी खड़ी हो जाती है।

शेर का खाना-पीना

शेर एक गोश्तखोर जानवर है। गोश्त होना चाहिए, चाहे वह कैसा ही हो, किसी का हो, शेर को स्वीकार है। सिवाय गोश्त के, शेर और कुछ नहीं खाता। कभी-कभी थोड़ी बहुत हरी घास दवाई की तरह अवश्य खा लेता है। कुछ लोगों का कहना है कि शेर अपना ही मारा गोश्त खाता है। यह बात ठीक नहीं है। किसी का मारा गोश्त हो, शेर को उसे खाने में कोई आपत्ति नहीं होती। कई बार मैंने साँभर मार कर पत्तों से ढक कर शेर के आने-जाने के रास्ते में रख दिए, और शेर जब भी उस रास्ते से निकला, लाशों को उठा ले गया। सीताबनी (रामनगर) पर एक साँभर की लाश पर मैंने एक शेर इसी तरह मारा था। यहाँ, मैंने साँभर मार कर शेर के लिए डाल दिया था। साँभर

की लाश के सड़ने की बू ने शेर को दूर से खींच लिया था।

कोई-कोई लोग यह भी कहते हैं कि शेर केवल ताज़ा ही गोश्त खाता है। यह भी गलत है। डौली (हल्द्वानी) में, जून की गरमी में सड़ी, कीड़ों से बिल-बिलाती कटरे की लाश को शेर एक ही दफे में सब खा गया था। मैंने एक बार डौली (हल्द्वानी) में एक शेर को कोई २५ सेर से ज़्यादा सड़ा और कीड़ों से बिलबिलाता गोश्त खाते देखा। अपनी मौत मरे जानवर अक्सर शेर खींच ले जाता है और दुबका कर रखने के बाद खाता है।

शेर के इर्द-गिर्द जो भी जानवर रहते हों, वे उसके स्वाभाविक भोजन में शामिल हैं। चीतल, साँभर, गोंद, काकड़, सूअर, बाइसन और कुछ न मिले तो गाय-बैल, भैंस, गधा, घोड़ा, और आन पड़े पर बन्दर, भेड़, बकरी और कभी-कभी आदमी तक को शेर नहीं छोड़ता। शेर अगर डरता है तो जंगली कुत्तों के झुंड से। इन्हें देखकर शेर अक्सर पेड़ पर चढ़ जाता है। कुछ शिकारियों ने जंगली कुत्तों के मारे शेरों का हाल लिखा है। न जाने क्यों, शेर गीदड़ों से भी घबराता है। मैंने कभी कोई शेर का मारा हुआ गीदड़ नहीं देखा। गीदड़ भी सदा दस-बीस के झुंड ही में रहते हैं। झुंड से निकला गीदड़ तो अक्सर शेर के साथ गोश्त की उम्मीद में लग जाता है। गाँववाले यह समझते हैं कि गीदड़ शेर को शिकार खिलवाता है। गीदड़ अक्सर शेर की छिपाई लाश खाने को पहुँच जाते हैं।

दिन की चकाचौंध, गरमी, और जानवरों का चौकन्नापन—ये बातें ऐसी हैं, कि शेर को रात ही में शिकार ढूँढ़ने को विवश करती हैं। मलाया के घोर जंगलों में शेर दिन में भी शिकार खेलते पाए गए हैं। शेर हमेशा सड़क, जंगली रास्ते, पगडंडी इत्यादि पर दाएँ-बाएँ, अपने को छुपाकर, धीरे-धीरे शिकार की तलाश में घूमता है। ऊँचे-नीचे रास्तों पर शेर पैर नहीं रखता। शेर अक्सर चलते-चलते रास्ते में खोरी लेता है। यह खोरियां १८ इंच लम्बी व १२ इंच चौड़ी होती हैं जो शेर के रास्ते में अक्सर मिलती हैं और पेशाब-पाखाने के साथ रहती हैं।

भूखे शेर क्या कुछ नहीं खाते? बाढ़ के दिनों में शेर कछुआ, मेढ़क, नाका और मछली पर ही गुजारा करते हैं। बर्टन ने तो शेर का खाया अजगर-साँप तक देखा था; सिम्सन ने एक शेर के पेट में टिड्डी भरी हुई पाई थी। सेही

तो शेर बड़े चाव से खाते हैं। सेही के काँटे अक्सर शेरों के हाथ-पैर और शरीर में मिलते हैं।

शेर को, दूसरा शेर खा जाने में भी कोई आपत्ति नहीं है। नर तो बहुधा अपने बच्चों को मारकर खा जाते हैं। इसीसे शेरनी अपने बच्चों को नर से बचाकर दूर पालती है। गोली से मारे हुए शेरों का खून देख दूसरे शेर उसको खाने लगते हैं। ढिकाले (कालागढ़) में, मैं एक शेर की लाश, खाल निकाल कर, जंगल में रख आया था। दूसरे दिन इस लाश को एक शेर उठा ले गया।

जैसे यह बात प्रसिद्ध है कि शेर अपनी ही मारी लाश को खाता है, वैसे ही लोग यह भी कहते हैं कि शेर की मारी लाश को कोई दूसरा जानवर नहीं खाता। ये दोनों बातें गलत हैं। शेर अपने शिकार को सब जानवरों से छिपाकर रखता है। यदि और जानवरों को पता लग गया तो सभी शेर के शिकार को खा जाते हैं। मैंने लकड़बग्घा, गीदड़, सूअर और न्यौलों को, शेर के शिकार को मचान पर से कई दफा खाते देखा है। एक बार, बधिया (पीलीभीत) में, शेर ने नदी के किनारे कटरा मार लिया था। शेर की प्रतीक्षा में एक राजा साहब मचान बाँध कर जा बैठे। जब अंधेरा हुआ तो थोड़ी देर बाद कोई जानवर कटरा खाने लगा। उन्होंने टार्च जलाकर उसकी चमकती आँख पर गोली मारी। रात भर ज़ख्मी शेर के डर से मचान पर बैठे रहे। जब सवेरा हुआ तो जान पड़ा कि जिस जानवर पर गोली चलाई थी वह शेर नहीं बल्कि नाका निकला। नाके, अक्सर पानी पीते शेरों पर भी हमला कर बैठते हैं।

शेर इसी कारण अपने शिकार को बहुत छिपाकर रखता है। कौए और गीध गोश्त की ताक में सदा लगे रहते हैं। शेर बहुधा अपने शिकार को काफ़ी दूर खींच ले जाता है। नदी-नाले, कीचड़-काँटे, झाड़ी के पार लाश ले जाना शेर के लिए मामूली बात है। पीलीभीत में तो एक बार शेर एक कटरे की लाश मुँह में ले शारदा नहर पार कर गया था। रंडसाली (हल्द्वानी) में एक शेर कटरे की लाश की ओज निकाल कर उसे हल्का कर लेता; और उसे बेंत, नरकुल और फँसन में ले जाता था। कभी यह पता भी न लगता था कि शेर किधर गया।

यदि कटरा, शेर के लिए बड़े मज़बूत रस्से से बाँधा जाए और शेर उसको

मारकर न खींच सके, तो वह कभी उसको खाने वापस नहीं आएगा। भारामल (पीलीभीत) में एक शेर ने कटरे के रस्से को ऐसा झटका दिया कि रस्सा तो नहीं टूटा पर पेड़ टूट गया। शेर पेड़ और कटरे दोनों को खींच ले गया।

शेर अपना शिकार एक ही जगह पर दो बार नहीं खाता। पहली रात खाने के बाद, बची-बचाई लाश फिर दूसरी जगह जा दुबकाता है। शेर एक बार में ३०-४० सेर तक गोश्त खा लेता है।

शेर जब अपनी छिपाई लाश को खाने आता है, तो सूंघकर ही उसे ढूंढ़ता है। 'नाक' शेर की आंख व कान से कम सही, पर ऐसा नहीं है कि उसे गोश्त की बू भी न आए। मैंने बहुधा सांभर, चीतल और शेर की लाशें पत्तों और झाड़ियों में गीधों से छिपा कर रक्खी हैं, और शेर सूंघकर ही उन्हें खींच ले गए हैं। एक बार माला (पीलीभीत) में, मैंने शेर की छिपाई एक लाश हाथी के द्वारा कोई सौ गज़ खिचवा कर रखवा दी थी। लाश की टांग में रस्सी बांध दी थी। शेर सूंघता-सूंघता लाश पर आ पहुँचा, और रस्सी में बँधी एक टाँग छोड़, बाकी लाश को खींच ले गया। बर्टन और कुछ और शिकारियों का यह कहना कि शेर सूंघ कर शिकार नहीं खेलता, ठीक नहीं है।

शेर जब किसी जानवर को मारता है, तो कूद कर नहीं झपट कर मारता है। शेर धीरे-धीरे पहले तो जानवर के पास पहुँच लेता है, और फिर एकदम झपट कर पहला वार गर्दन पर करता है। शेर के मारे जानवरों की गर्दन और गले पर दाँतों के गहरे निशान होते हैं। बड़े जानवरों के गले पर और छोटे जानवरों की गर्दन पर भी। जानवरों को शेर की बेआहट चाल की खबर तक नहीं होती। सैंडर्सन ने शेर की मारी सैंकड़ों लाशों में देखा कि केवल एक सूअर और एक बड़ा भैंसा तो शेर ने जरूर गर्दन से मारा था, बाकी सब गले से। सूअर शेर से छोटा होता है और अक्सर उसकी गर्दन पर ही शेर की कीलों के निशान मिलते हैं। बाल्डविन और फौरसाइथ ने बैलों तथा जानवरों की गर्दनों पर शेर के निशान देखे। इन दोनों की राय में, शेर गर्दन पर कीलें गड़ाकर, पंजों से जानवर को दबा, गर्दन तोड़ देता है। मैंने कटरों की गर्दन और गले, दोनों ही पर शेर के दांतों के निशान देखे हैं। शेर किस तरह अपने शिकार को मारेगा, यह मौके पर निर्भर है। किन्तु अधिकतर उसका पहला वार गर्दन पर ही होता है। शेर जानवरों को मारते समय, पंजों को दबाने में, और दांत मारने

Acc. No. 24502
Date 14.5.68

में काम में लाता है। बड़े जानवरों पर पीछे से उनकी टाँगों को काट कर हमला करता है। वैसे तो सब घायल शेरों ने मेरे हाथी पर सामने से ही हमला किया, किन्तु एक बार, पीलीभीत में, एक शेर ने पीछे से हाथी की टाँगों पर झपटकर कीले गड़ा दिए थे। दक्षिण में गौड़ को शेर पीछे से ही मारता है।

शेर के बराबर साफ-सुथरा खाने वाला कोई जानवर नहीं है। शेर अपने शिकार को हमेशा पिछली रान (जाँघ) से खाना शुरू करता है, और बाल, खाल, गोश्त और हड्डी सभी को खा जाता है। बड़ी सफाई से शिकार के पेट से गोबर भरी ओज (आँतें) काटकर निकाल फेंकता है।

सन् १९३५ में, जबलपुर के उत्तर में, वाडिया साहब ने रात भर शेरों की लड़ाई की आवाज़ सुनी। अगले दिन, एक शेर मरा पड़ा था। उसको मारने वाले दूसरे शेर ने, थोड़ी दूर खींचकर, उसे खाया भी था। जब शाम को इस शेर की लाश पर वाडिया साहब बैठे, तो दिन छिपे वह शेर, जिसने उसे मारा था, आया और मारा गया।

शेर अकेला ही शिकार खेलता है। एक जंगल के टुकड़े में प्राय: एक ही शेर रहता है। यदि वह शेर मारा गया तो थोड़े ही दिनों में इस टुकड़े में दूसरा शेर आ जाता है। मादा हमेशा अपने बच्चों के साथ रहती है।

भारामल (पीलीभीत) में मेरी पत्नी ने मचान से एक शेरनी को मारा। थोड़ी देर बाद, नर कटरे की लाश को खींच ले गया, जिसके पास शेरनी मरी पड़ी थी। उसने शेरनी की कोई परवा नहीं की।

जंगलों में, जहाँ खुले ढोर (मवेशी) और जंगली जानवर साथ-साथ चरते हैं, शेर बहुधा गाय-भैंस मारने लगते हैं। यदि शेर को ढोर मारने का चस्का पड़ गया, तो फिर वह जंगली जानवरों को मारने की कोशिश करना छोड़ देता है। जिन जंगलों में लोग चीतल, साँभर, सूअर इत्यादि का दिन-रात शिकार खेलते हैं, वहाँ, शेर ढोरों ही पर रहने लगता है। मलाया व जावा में शेर, बकरी, भेड़ी, कुत्ते, बन्दर और बिल्ली तक को उठा ले जाते हैं। और कुछ न हो तो शेर घोड़े को भी मार लेता है। हलद्वानी के एक खेत के पास शेर ने एक घोड़ा मार लिया था। कभी-कभी शेरों ने, सिक्कम से लगी हुई तिब्बत के रास्ते पर, चुंबी घाटी में, याक भी मार लिए हैं।

गर्मियों में जब जंगल में पानी कम होने लगता है तो शेर, पानी के किनारे

आ लगते हैं, और उसके पास आते-जाते प्यासे जंगली जानवरों पर चोट करते हैं। कहीं-कहीं तो शेर, जानवरों की नमक की चाट के पास भी देखे गए हैं। मगर मैंने सहारनपुर में देखा कि जंगली जानवर, न तो पानी पर शेर के हाथ आते हैं और न नमक की चाट पर। जंगली जानवर पानी पर बड़ी सावधानी से खटका लेते हुए आते हैं। ढिकाला (कालागढ़) में, एक पानी पर मैंने सूर्य निकलने से पहले, सूअर, चीतल, काकड़, और मोर, एक ही जगह पानी पीते देखे। मैं हाथी पर था, मैंने हाथी को भी पानी पीने पर लगा दिया। इतने में एक काकड़ की निगाह मेरे ऊपर पड़ गई। उसने ऐसा शोर मचाया कि सब जानवर भाग गए और मुझे पानी के पास शेर का मारा कभी कोई जानवर नहीं मिला।

शेर यदि भूखा न हो तो अकारण किसी जानवर को नहीं मारता। मैंने कई बार बँधे कटरों के पास से शेरों के निकल जाने के निशान देखे हैं।

शेर वैसे तो बड़ा साफ-सुथरा जानवर है, पर थोड़ी-बहुत बू उसमें आती ही रहती है। मादा जब गरम होती है तो उसकी बू और आवाज पर नर आता है और जंगली जानवर शेर की बू लेकर चौकन्ने हो जाते हैं। मेरा हाथी, शेर की बू लेकर अपनी सूँड़ से बताता था कि शेर पास है।

आदमी के हाथ, जंगली जानवर राइफल व बन्दूक से भी मुश्किल से ही आते हैं। पर इन जानवरों को शेर, हाथ से पकड़कर, अपनी कौतुकप्रियता का परिचय देता है। शेर जंगली जानवरों का शिकार करने में कैसे-कैसे षड्यन्त्र रचता है! धीरे-धीरे, अँगूठों के बल चलकर, जानवरों के पास तक पहुँचना, कभी जोर से दहाड़ कर उन्हें डराना, कभी घास में जमीन से लगकर लेट जाना, कभी झाड़ी में दुबकना—यह सब शेर के बाएँ हाथ के काम हैं। एक बार बेरी-बाड़ा (सहारनपुर) में एक शेर ने पहाड़ी के एक ओर से चढ़ कर साँभरों को खदेड़ा, और फिर दूसरी ओर से जाकर आक्रमण किया।

जगली जानवर भी ऐसे ढीठ होते हैं कि शेर का खटका ले तमाशा देखते हैं, भागते नहीं। कुछ शिकारियों का कहना है कि चीतल, गोंद, साँभर, शेर को देखकर सहम जाते हैं, यह गलत है। शेर को देखते ही जानवर खुले में खड़े होकर और शोर मचाकर एक-दूसरे को खतरे की सूचना देने लगते हैं। मैंने एक चीतल के बच्चे को अपनी पूँछ की सफेदी को ऊँची कर ऐसा शोर मचाते

देखा कि शेर को वहाँ से खिसकना ही पड़ा।

हाँ, जब तक शेर का खटका रहता है तब तक चीतल, साँभर और गोंद खड़े होकर चारों ओर चौकन्ने रहते हैं, और चरना छोड़ देते हैं। कभी-कभी जब शेर और शेरनी दोनों साथ-साथ शिकार खेलते हैं, तो जंगली जानवर एक से बचकर दूसरे के दाव में आ जाते हैं। पर अधिकतर शेर अकेला ही शिकार खेलता है।

बात असली यह है कि जंगली जानवर शेर के हाथ बड़ी मुश्किल से आते हैं। शेर रात ही में शिकार खेलता है। दिन में उसकी आँखें कम काम देती हैं, और अन्य जानवरों की ज्यादा। शेर बहुधा रात में मीलों घूमता है, और शिकार न मिलने पर, दिन निकलते ही निराश और भूखा झाड़ियों में जा लेटता है। रात में अगर धोखे से कोई जानवर हाथ लग गया तो बात दूसरी रही। एक महीने में शेर को तीन या चार बार से अधिक खाने को नहीं मिलता।

बड़े जानवरों से शेर जोखिम कम ही लेता है, और भैंसे, गौड़, नन्दी इत्यादि से दूर ही रहता है। यदि उन पर कभी हमला किया भी तो पिछली टाँगों पर। जानवर टाँग टूटने पर गिर जाता है। बर्मा में तो शेर, टाँग टूटे हुए जीवित जानवरों को खाते कितनी ही बार देखे गए हैं। जंगली भैंसे बहुधा शेर को अपने सींगों से मारकर भगा देते हैं। भैंसे इकट्ठी होकर बहुधा झुंड में, शेर पर आक्रमण कर बैठती हैं। शेर जंगली सूअर से भी घबराता है, और उन पर एकाएक आक्रमण नहीं करता।

शेर अपने शिकार को खींचकर ऐसी घनी झाड़ी में ले जाता है जहाँ उसे कोई और जानवर या गीध न खा सके। यदि लाश पर गीध पड़ गए तो शेर उस पर वापिस नहीं आता। यदि जंगल अच्छा घना हुआ, तो शेर लाश ही के पास रहता है। अगर कोई खटका हुआ, या जंगल का टुकड़ा छोटा हुआ, तो शेर लाश को अच्छी तरह दुबका कर दूर निकल जाता है, और दिन छिपे वापिस आता है। यदि कोई भी खटका हुआ, तो शेर दूर ही से लौट जाता है। फिर अगले दिन या उसके बाद भी शेर अपनी मारी लाश देखने आता है। लाश चाहे कितनी ही क्यों न सड़ जाए, या उसमें कीड़े ही क्यों न पड़ जाएँ, पर शेर को उसे खाने में कोई हिचक नहीं। मारे हुए जानवर की लाश पर लौटने से उसे केवल खटका या खतरे का सन्देह ही रोकता है।

आदम-खोर या मनुष्य-भक्षी शेर

शेर, जो आदमी की ऊँचाई, उसके कपड़े व उसकी दो टाँगों से घबराता है, कभी-कभी उसको मारकर खाने लगता है। बूढ़े, कमजोर, घायल व चुटियल शेर जंगली जानवरों को आसानी से पकड़ नहीं सकते। अगर कहीं उनके हाथ आदमी आ गया, तो अपने खाने का ढंग बदलकर आदमी ही को मारकर खाने लगते हैं। आदमी की ऊँचाई का डर जहाँ शेर के दिल से हटा, फिर आदमी की खैर नहीं रहती। आदमी के बराबर कोई जानवर इतनी आसानी से हाथ नहीं आता। आदमी के गोश्त का चस्का जहाँ लगा, तो जानवरों को छोड़ शेर आदमी ही की टोह में रहता है। आदम-खोर शेर गाय, भैंस को छोड़, उनके चरवाहों को उठा ले जाता है। औरतें, जो जंगल में लकड़ी व घास लेने जातीं हैं, अकसर शेर का शिकार बन जाती हैं।

मनुष्य-भक्षी शेरनी, अपने बच्चों को भी आदमी के गोश्त का चस्का डाल देती है। कहीं-कहीं तो मरे आदमियों की लाश दरिया में फेंकने का रिवाज शेरों को आदमखोरी सिखा देता है।

अक्सर देखा गया है कि मनुष्य भक्षी शेर आदमी की गोली से घायल, सेही के कांटों से अपाहिज या बूढ़े और लाचार जानवर होते हैं। पहाड़ों में, जहाँ शिकार और भी कठिन है मनुष्यभक्षी शेर बहुतायत से होते हैं। कुमायूँ में, मनुष्य-भक्षी शेर तो अक्सर मारे गए हैं। ओसमेस्टन ने एक मनुष्य-भक्षी शेरनी चकराते से ऊपर मंडाली में मारी थी (१८८६)। कैप्टेन ब्रूस एबट ने लोहाघाट के मनुष्य-भक्षी शेर को, जिसने करीब १५० आदमी मारे थे, मारा था। ब्रैंडन ने बैजनाथ के पास एक मनुष्यभक्षी शेर का हाल लिखा है, जो मवेशी छोड़ आदमियों को ही खाता था। कई मनुष्य-भक्षी किलबरी रतीघाट (नैनीताल) और गढ़वाल में मारे गए। कुमायूँ के मनुष्य-भक्षियों को तो कोरबेट ने ऐतिहासिक बना दिया है।

कुमायूँ के पहाड़ी लोग अपने मवेशी ले जाड़ों में घाम तापने भाभर में हर साल उतर आते हैं। होली पर जब ये लोग पहाड़ वापिस जाते हैं तो कभी-कभी भाभर के शेर इनके मवेशियों के पीछे-पीछे पहाड़ पहुँच जाते हैं। पहाड़ों में जंगली जानवरों का शिकार तो मिलता नहीं। औरतें-बच्चे घास-लकड़ी लेने

दूर-दूर तक जाते हैं। अक्सर भाभर के शेर इनको मारकर मनुष्य-भक्षण शुरू करते हैं।

कालागढ़ में बुकसार के पास मैंने एक शेर, एक औरत की लाश पर मारा था। यह शेर, नर, अच्छा खासा जवान और वगैर किसी चोट या जख्म के था। मौके पर, वहुत छानवीन के वाद यह पता चला कि वह बेचारी औरत नाले में बैठी घास काट रही थी। शेर ने नाले के किनारे से जो देखा, तो उसको कोई जानवर समझ कर हमला किया। मुझे दृढ़ विश्वास है कि अगर वह औरत नाले में खड़ी या चलती-फिरती होती तो शेर उस पर कभी न हमला करता। इस शेर ने कभी कोई आदमी इससे पहले नहीं मारा था।

आदमी को मारने वाले और आदमी को खाने वाले शेर में वहुत अन्तर है। काठगोदाम (नैनीताल) के पास शेलजाम के एक पहाड़ी टीले पर एक शेर धूप खा रहा था। एक औरत घास काटते-काटते उसके मुँह पर जा पहुंची। शेर ने एकाएक उठकर एक पंजा मार दिया और वहाँ से चला गया। औरत मर तो जरूर गई पर शेर ने उसकी लाश छुई तक नहीं। यह शेर मनुष्य-भक्षी नहीं कहा जा सकता।

गंगा के मुख के द्वीपों में (सुन्दरवन) हमेशा मनुष्य-भक्षी शेर रहे और अब भी वहुधा मिलते हैं। सागर द्वीप में तो दो अंग्रेजों को एक मनुष्यभक्षी उठा ले गया था। वस्तर व चाँदी में अक्सर मनुष्यभक्षी शेर मारे गए हैं। सिंगापुर में मनुष्य-भक्षियों की चरचा उन्नीसवीं सदी के आखिर तक रही। वहाँ शेर के गोश्त व चर्बी का अच्छा खासा रोजगार है।

मनुष्य-भक्षी शेरों की कहानियों से रोंगटे खड़े हो जाते हैं। कहा जाता है, कि चीत्तू (पिंडारी) की मौत शेर के मुँह में ही हुई। उसकी तलवार, काठी व आपा साहव भोंसले की चिट्ठी उसके सर के साथ जंगल में मिली। शेर आदमी का सर छोड़ देता है। वर्मा में कैप्टेन हिल पर शेर ने जव हमला किया, तो उनको अकेला छोड़ सारे सिपाही भाग गए। हिल ने अपने को केवल लाठी ही से वचा लिया। मध्य प्रदेश में एक भील ने एक वनविभाग के अफ़सर जार्ज को, वन्दूक को लाठी की तरह चलाकर वचा लिया था। इस वेचारे भील को वन्दूक चलानी ही नहीं आती थी।

मनुष्य-भक्षी शेर ज़्यादातर जख्मी व चुटियल शेर होते हैं। कोरवेट के कई

मनुष्य-भक्षी (मोहन, मुक्तेश्वर), सेही के काँटों के जख्मों से बौखलाए, आदमी पर वार करते थे। कहीं-कहीं तो शेर अपने अपने माँ-बाप से आदमी का खाना सीखते हैं। सुन्दरबन के शेरों की नसल ही आदम-खोरों की है। इसी तरह चीतल-दुर्ग (मैसूर) व मंडला (मध्य प्रदेश), मनुष्य-भक्षियों से कभी खाली नहीं रहते।

कभी-कभी शेर कुत्तों की तरह पागल हो जाते हैं। रेबीज़ की बीमारी से १९४३ में एक शेर ने नौगाँव (असम) के पास ३६ घण्टों में १८ आदमियों को, घरों में घुसकर घायल किया, जिनमें ११ मर गए। असम में इसी तरह १९५० में एक पागल शेर ने एक ही रात में १४ आदमियों पर हमला किया जिनमें ३ मर गए।

मनुष्य-भक्षी शेर, आदमी का रहन-सहन, उसकी आदतें व हरकतें सब अच्छी तरह जान जाते हैं। राहगीरों को पकड़ लेना, लोगों के घर में घुस आदमी को ले जाना, दस-बीस सोते आदमियों के बीच में से एक आदमी को खींच ले जाना, यह सब उनके बाएँ हाथ का खेल है।

मनुष्यभक्षी शेर कभी आदमी की लाश पर वापिस नहीं आते। लाश छोटी व हल्की होने के कारण, दूर उठा ले जाते हैं। एक जगह कम रुकते हैं। मीलों की मंजिल एक साँस में तै करते हैं। कभी-कभी जब आदमी न मिले तो दूसरे जानवर भी मार लेते हैं। मगर गाय, बैल व भैंस को छोड़, आदमी के ऊपर हमला करना, मनुष्य-भक्षी शेर की खास पहचान है। मनुष्य-भक्षी अक्सर बरसों में मारे जाते हैं। इनको आग का डर भी नहीं रहता। उल्टे आग के पास आदमी की तलाश करते हैं। मनुष्य-भक्षी शेर अचानक धोखे से पीछे से हमला करता है। इसके वार से विरले ही बचते हैं।

शेर का डील-डौल

शेर का कद, शिकारियों, मुसाहिबों व खुशामदियों ने अपनी कारगुजारी का सिलसिला बना रखा है। अभी थोड़े दिनों की बात है कि मुझसे एक शिकारी ने कहा कि हमारे कुँअर साहब ने १६ फुट का शेर मारा! मैसूर के हैदरअली ने जो शेर की खाल नवाब आरकट को भेजी थी उसकी लम्बाई १८ फुट कही जाती थी। कैम्पबेल ने तो २० फुट तक का शेर सुना। २ अगस्त, १९४४ की अमृतबाजार पत्रिका में १८ फ़ुट लम्बे शेर के मारे जाने का हाल छपा।

बारह फुट के शेर तो सभी की जबान पर रहते हैं। यह अक्सर शेर की नहीं, बल्कि उसकी गीली, खींची हुई खाल की लम्बाई का नाप रहता है। शेर नापते हुए, फीता खींचना, फीता गलत लगाना, फीते के पहले हिस्से से ८ व ९ इंच काट देना, डोरी इस्तेमाल करना और यहाँ तक कि १४ गिरह का गज इस्तेमाल करना शिकारियों के बाएँ हाथ का काम है। किसी सूरत से राजा साहब को यकीन हो जाए कि जितना बड़ा शेर उन्होंने मारा, उतना बड़ा शेर पहले कभी नहीं मारा गया। बस, उनका उल्लू सीधा हो गया। सच पूछिए तो नौजवान छरहरे शेर की बनिस्बत बूढ़े-बड़े, मोटे-भारी शेरों को मारना कहीं मुश्किल है। मगर कुछ ऐसा रिवाज है कि हर व्यक्ति अपना मारा शेर दुनिया में सबसे बड़ा बताने की कोशिश करता है। लोग खुशी के मारे अक्सर अपने हाथ से तो क्या, अपने सामने तक भी शेर नहीं नपवाते। शिकारी ने जो नाप बताया, मान लिया। अपनी तस्वीर खिचाकर समाचार-पत्रों में छपवा दी और शिकारी की बताई लम्बाई-चौड़ाई लिख मारी। मार्च सन् १९३२ के टाइम्स ऑफ इण्डिया में एक अमरीकन कर्नल मि० वाह के मारे हुए शेर का नाप था—लम्बाई ११ फुट, ऊँचाई ४ फुट, और वज़न १,००० पौण्ड!

पिछले १०० वर्ष का शिकार-साहित्य यदि देखा जाए तो ११ फुट व उससे ऊपर के नाप के शेर मारने वालों के बहुत नाम मिलेंगे। पुरनिया ज़िले के नील की काश्त करने वाले शिलिंगफर्ड के भाई-बन्धु व मित्रों ने १८६५-१८७८ तक १३ वर्ष में १७० शेर मारे थे। इनमें सबसे बड़ा शेर ११ फुट ५ इंच लम्बा था। इन्हीं के रिश्तेदार एक-दूसरे शिलिंगफर्ड ने पुरनिया ही में सन् १८४९ में एक शेर मारा था, जो १२ फुट ४ इंच लम्बा था। विलियमसन का कासिम बाजार द्वीप का शेर १३ फुट से एक दो इंच ऊपर ही था और उसकी ऊँचाई करीब ४ फुट के लगभग थी। कहा जाता है कि सर हेनरी रैमज़े ने कुमायूं में, व कर्नल बोइल (१८६१) ने अवध में, १२ फुट के शेर मारे। कैप्टन राइस के मध्य प्रदेश के १८५०-१८५४ तक के मारे हुए ६८ शेरों में सबसे बड़ा शेर १२ फुट ७½ इंच था। गोरखपुर में एक शेर मारा गया, जिसकी लम्बाई ११ फुट और ऊँचाई ४ फुट १० इंच थी।

पुराने ज़माने में लोग शेर की नहीं बल्कि उसकी गीली खिची हुई खाल

का नाप देते थे। यहाँ तक कि एक शिकारी ने एक शिकार की मासिक पत्रिका में साढ़े दस फुट की खाल को १२ फुट लम्बी बनाने की तरकीब लिखी है। शेर की ताजी गीली खाल का २-३ फुट खिच जाना कोई बड़ी बात नहीं। कोई ताज्जुब नहीं कि बहुत से १२ फुटे शेर, १० फुट से ज्यादा न हों।

"रोलैण्ड वार्ड ने चार सबसे बड़े शेरों की जो लम्बाई दी है, वह यह है—

नाम				जगह	शिकारी
शेर		खाल			
फुट	इंच	फुट	इंच		
११	५$\frac{1}{2}$	११	४	ग्वालियर	लार्ड हार्डिज
११	५	११	७	ग्वालियर	लार्ड रेंडिग
११	०	१२	०	नैपाल	जनरल सर कैसर शमशेरजंग
११	०	११	६	भिअदा	महाराज दतिया

इन शेरों की तैयार खाल के नाप में तो शुबहा हो ही नहीं सकता। हाँ, शेर के नाप में ज़रूर शायरी की गुंजाइश है। रोलैण्ड वार्ड ही के यहाँ तैयार की हुई खालों से यह पता चलता है कि १० शेर, जिनकी औसत लम्बाई १० फुट ५$\frac{1}{2}$ इंच थी, उनकी खालों की औसत लम्बाई ११ फुट ८ इंच उतरी। इस हिसाब से ऊपर लिखे चार शेरों की लम्बाई १० फुट ६ इंच से ज्यादा नहीं हो सकती। लार्ड हार्डिज का शेर २५ आदमियों के सामने नापा गया, जिसमें १८ आदमियों ने नाप सही होने के दस्तखत किए। मगर रोलैण्ड वार्ड ने साथ न दिया। खाल की लम्बाई से तो जनरल सर कैसर शमशेर जंग का ही शेर सबसे बड़ा मालूम पड़ता है। यह खाल मैंने काठमाण्डू में देखी थी। लार्ड मेओ ने भी पुरनिया ज़िले में ११ फुट का शेर मारा था। वाइसरायों के शेर कुछ तो होते ही बड़े हैं, और कुछ हो भी बड़े जाते हैं! ग्वालियर के सिंधिया महाराज ने लगभग ८०० शेर मारे और उनके सामने सब मिला करके १,४०० शेर मारे गए, मगर ११$\frac{1}{2}$ फुट के शेर लार्ड रेडिंग व हार्डिज की ही प्रतीक्षा करते रहे!

शेर की लम्बाई नापने का पुराना तरीका था कि फीता नाक की जड़ से लगाकर नाक व कानों के बीच में ले जाकर, रीढ़ की हड्डी को छूता हुआ, पूंछ के सिरे तक लगाते थे। इस गोल नाप में शायरी की बड़ी गुंजाइश है। रोलैंण्ड वार्ड ने शेर की लम्बाई नापने का सही तरीका बताया है कि शेर एकसार ज़मीन पर खींच कर सीधा लिटाया जाए। एक खूंटी नाक के, और एक खूंटी पूंछ के सिरे पर गाड़ी जाए। इन दो खूंटियों के बीच का फासला शेर की सही लम्बाई है। यह खूंटी-नाप, शेर के पुराने गोल नाप से, एक फुट में लगभग ३/४ इंच कम बैठता है। १० फुट के शेर का खूंटी नाप ९ फुट ५ इंच से भी कम उतरता है।

सर जोसेफ फैरर, डॉ० जारडन व सैंडरसन की राय में १० फुट के शेर की गिनती बड़े शेरों में है। सर जान ह्वीवट के कैम्प में २४७ में २४७ शेर मारे गए। इनमें सबसे बड़ा शेर १० फुट ५½ इंच और शेरनी ९ फुट ६ इंच थी। सबसे भारी शेर ५७० पौण्ड (९ फुट ७½ इंच) और सबसे भारी शेरनी का वजन ३४७ पौण्ड था। यह गोल-नाप है; खूंटी-नाप नहीं। बेकर ने कई सौ शेर बंगाल व असम में मारे। इनमें सबसे बड़ा शेर १० फुट ४ इंच था। विनडम को, जिसके सामने ४-५ सौ शेर मारे गए, कभी १० फुट २ इंच से बड़ा शेर नहीं मिला। सर अर्डली विलमट के २०० शेरों में सबसे बड़ा शेर १० फुट ३½ इंच था। सिमसन ने एक शिकारी से, जिसने ४-५ सौ शेर मारे थे ११ फुट का शेर मारा जाना सुना था, पर खुद कभी १० फुट १ इंच से बड़ा शेर न मारा था। महाराजा कूचबिहार ने अपने ३७ वर्ष (१८७१ से १९०७) के शिकार में ३६५ शेर मारे। इनमें सबसे बड़ा शेर १० फुट ५ इंच और सबसे बड़ी शेरनी ९ फुट ५½ इंच थी। सबसे भारी शेर ५४६ पौण्ड था। बर्टन के ४० शेरों में सबसे बड़ा ९ फुट ८ इंच (खूंटी-नाप) और मेरा सबसे बड़ा शेर खूंटी-नाप ९ फुट ९ इंच था।

क्योंकि पूंछ की लम्बाई, शेर की लम्बाई में शामिल है, छोटी-बड़ी पूंछ से शेर के जिस्म की लम्बाई पर असर पड़ता है। पूंछ २ फुट ९ इंच से लेकर ३ फुट ८ इंच तक होती है। औसत ३ फुट।

जैसे आदमी की ऊँचाई ६ फुट है, वैसे शेर का खूंटी नाप दस फुट समझना चाहिए। १२ फुट के शेर ऐसे ही हैं जैसे ८ फुट के आदमी! १० फुट ६ इंच

खूँटी नाप से बड़े शेर सिर्फ़ लोगों के ख्याल में, शिकारियों की शायरी में, व खुशामदियों की कारगुज़ारी ही में होते हैं। शेरनी, शेर से फुट भर कम होती है, और शेर (नर) की ऊँचाई ज़्यादा से ज़्यादा ३ फुट ६ इंच और वज़न ५७५ पौण्ड होता है।

शेर की नसल

सिंह, शेर, व गुल्दार जंगलों में एक-दूसरे से अलग रहते हैं। चिड़ियाघरों में सिंह और शेर के जोड़े के बच्चे होना सम्भव है। एक ऐसा बच्चा जाम साहब ने लन्दन के चिड़ियाघर में भेजा था जो ८ वर्ष तक रहा।

सिंह व शेर साथ-साथ एक ही जंगल में नहीं रहते। शेर सदा घने जंगलों में रहता है, और सिंह खुले मैदानों में। चिड़ियाघरों के शेरों से यह पता चलता है कि शेरनी के आम तौर पर ३ बच्चे होते हैं[1]। सैंडर्सन ने एक बार जंगल में ४ बच्चे पकड़े थे।

शेरनी के पेट में बच्चे लगभग १०० दिन रहते हैं। शेरनी एकान्त में, पहाड़ों की खोलों, चट्टानों या खोखले पेड़ों में अपने छोटे-छोटे बच्चों को दुबका कर रखती है। माँ बच्चों को गरदन की खाल से, मुंह से उठा कर एक जगह से दूसरी जगह ले जाती है। शेरनी यदि अपने बच्चों के साथ हो तो किसी को पास नहीं फटकने देती। ज़रा भी खटका होने पर अपने बच्चों को दूसरी जगह जा छिपाती है। नए पैदा हुए बच्चों का वज़न कोई डेढ़ सेर होता है।

एक बार, देहरादून के जंगलों में, एक शेरनी ने, एक वन अधिकारी कांजीलाल पर दिनदहाड़ हमला किया था। यह बेचारे साल की छोटी पौध का नाप जमीन पर बैठे लिख रहे थे, और फोरेस्टर फीते से उसका नाप बोल रहा था। इस हमले में कांजीलाल इसलिए बच गए कि शेरनी के हाथ में इनका मोटा टोप फँस गया। जब ये लोग इस पर भी न गए तो शेरनी ने दुबारा हमला किया। बाद को मालूम हुआ कि साल की पौध के पास, जिसकी नाप-तोल में वे लगे थे, एक खोखले पेड़ में शेरनी के बच्चे थे।

---

१. मैनचेस्टर के चिड़ियाघर में एक शेरनी ने जुलाई सन् १९३२ में ५ बच्चे दिए थे, पर वे थोड़े ही दिन जी पाए। कालागढ़ में एक शेरनी मारी गई थी जिसके पेट में ७ बच्चों के भ्रूण थे।

वच्चों के पैदा होने का कोई खास मौसम नहीं है।[1] माँ के साथ बच्चे काफी दिनों तक रहते हैं। वैसे तो नर अलग ही रहता है, पर कभी माँ, बाप व बच्चे साथ-साथ भी देखे गए हैं। मोहन्ड (सहारनपुर) के पास, एक शेर, शेरनी व ३ वच्चे मेरे शिकारी को एक साथ मिले। नए वच्चे पैदा होने से पहले ही शेरनी वड़े वच्चों को छोड़ देती है।

माँ वच्चों को शिकार खेलना, लाश छिपाना, वेआहट चाल, लाश पर खटका लेना, यह सब बातें वड़े धैर्य से सिखाती है। अधिकतर शेरनी के साथ दो ही वड़े वच्चे देखे गए हैं, मगर कभी-कभी तीन वच्चे भी माँ के साथ पाए गए हैं। इससे ज्यादा वच्चे पैदा होने पर मर जाते हैं।

पीलीभीत में, माला के पुल के पास, मैंने मचान पर वैठकर एक शेरनी को अपने वच्चों को सिखाते-पढ़ाते देखा। सामने शेरनी की मारी लाश पड़ी थी। दिन छिपे, पहले तो माँ आई। माँ चारों ओर कोई आधे घंटे तक घूमती रही। जव उसने तसल्ली कर ली कि कोई खतरा नहीं है, तो वच्चों को आवाज दी। न जाने कहाँ से दो वच्चे खेलते-कूदते आए। वच्चे सीधे लाश पर जब पहुँचे, तो माँ ने डाँटा। एक ओर, लाश से दूर, माँ वैठी, दूसरी ओर वच्चे। कोई १५-२० मिनिट तक वच्चे चुपचाप वैठे रहे। इसके वाद माँ ने इशारा किया: दोनों वच्चे लाश पर टूट पड़े। माँ दूर वैठी उनको रखाती रही।

माँ, वच्चों को शिकार खेलना और जानवरों को मारना भी सिखाती है। वच्चे शुरू में किसी जानवर को मार नहीं पाते। वहुधा दोनों भाई-वहन अपने शिकार पर लिपट पड़ते हैं। शेर के पट्ठे खटका पाने पर दुवक नहीं सकते। टिक्करपारे (उड़ीसा) में मेरे सामने एक शेर का वड़ा वच्चा मुझे देखकर थोड़ी देर रुका और फिर लाश छोड़कर चला गया। और, थोड़ी देर बाद, फिर लौट आया। पीलीभीत में शारदा की ढाय पर मचान बाँधकर मेरी पत्नी जव वैठी, तो खटका पा, वजाय भागने के, शेर का पट्ठा फिर आ गया। वहीं पर एक मुर्गी अपने वच्चों के साथ घूम रही थी। मुर्गी शोर मचा कर इस शेर पर झपटी। यह पट्ठा विना खटका लिए वहुत देर तक घूमता रहा और उसके

१. वर्टन ने बच्चे दिसम्वर, मार्च और अप्रैल में देखे। सैंडर्सन ने मार्च, मई व अक्तूबर में पकड़े। बच्चों की आँखें नवें दिन खुलती हैं। कोई दो हफ्ते तक अच्छी तरह देख नहीं सकते, और माँ के साथ ही बने रहते हैं।

बाद अपनी दुबकाई लाश पर दूसरे रास्ते से गया; उस रास्ते से नहीं, जिस पर मुर्गी के बच्चे थे।

एक बार मेरी पत्नी मचान पर बैठी थीं। नीचे एक कटरे की लाश सूत के रस्से से बँधी पड़ी थी। अँधेरा होते ही शेर का पट्ठा लाश पर आ पहुँचा। लाश खींचने की बहुत कोशिश की, मगर जब सूत का रस्सा नहीं टूटा तो वहीं बैठ कर खाने लगा। मेरी पत्नी ने टार्च जलाई। टार्च की रोशनी में भी यह शेर का बच्चा बड़े इत्मीनान से खाता रहा। यदि कोई बड़ा शेर होता तो न जाने कब का खिसक गया होता।

शेरनी जब तक अपने बच्चों को अच्छी तरह सिखा-पढ़ा नहीं लेती, तब तक उनको नहीं छोड़ती। बच्चे, माँ के साथ कोई दो साल तक रहते हैं। फोरसाइथ का कहना है कि जंगल में शेरनी के ३ साल के बाद दूसरे बच्चे होते हैं।

नर को बच्चों का खेल-कूद पसंद नहीं होता। बहुधा नर बच्चों को मार देता है और खा भी लेता है। बैंस्ट ने एक बार शेर के दो पट्ठों को मरा पाया। नर ने दोनों के पीछे का हिस्सा खा लिया था और उनमें से एक को, कोई १५० गज, खींच भी ले गया था। कर्नल स्काट ने एक शेर के ताज़े मारे हुए पट्ठे को देखा जिसका दायाँ हिस्सा शेर खा गया था। कर्नल फ्रैज़र का कहना है कि अगर मादा मारी जाए तो नर अपने साथ बच्चों को रखने लगता है।

गोरखपुर (नौतनवा) में, राजा तमकोही के शिकार में, मैंने एक शेरनी को अपने छोटे-छोटे बच्चों के बचाने में जान देते देखा। ब्रैंडन ने लिखा है कि एक शेरनी अपने ८ महीने के ३ बच्चों को छोड़कर भाग गई थी।

शेर थोड़े ही दिनों तक शेरनी के साथ रहता है। कभी-कभी एक ही लाश पर एक शेर के साथ दो शेरनी भी देखी गई हैं।

वैसे तो शिकार में शेर ज़्यादा मारे जाते हैं, किंतु यह कहना कठिन है कि शेर, शेरनियों से ज़्यादा होते हैं। इस मामले में शिकारियों की अलग-अलग राय है। सैंडर्सन और बैंडर दोनों ही की राय में शेरनियाँ शेरों से ज़्यादा होती हैं। १९३६-३९ में भारतवर्ष में ६६८ शेर मारे गए। इनमें शेरनियाँ २०० ही थीं। बात असली यह है कि शेर शेरनी से ज़्यादा बहादुरी दिखाता है, और मार खा जाता है। एक ही शेरनी के लिए दो शेरों की अक्सर लड़ाई भी हो जाती है। इस लड़ाई में कमजोर शेर ज़ख्मी होकर हट जाता है। फोरसाइथ ने एक बार तो

एक शेरनी के लिए ३ शेरों को लड़ते देखा। शेर व शेरनी जब गरमी में होते हैं, तो आते-जाते राहगीरों पर हमला कर बैठते हैं।

लगभग दो वर्ष तक शेर, माँ के पीछे-पीछे ही रहता व शिकार खेलना सीखता है। तीन या चार वर्ष की उम्र में शेरनी के पहले बच्चे होते हैं। शेर पाँच साल की उम्र तक थोड़ा-बहुत बढ़ता रहता है।

शेर का शिकार

पुराने युग में शेर को लोग तीर, भाले और तलवार ही से मारते थे। गाँव के लोग और जंगल के रहने वाले, गड्ढे बनाकर और उन पर घास-फूस ढककर, शेर को फँसा लेते थे। कहीं-कहीं शेर को लोग जाल में भी फाँस लेते थे, किन्तु शेर ऐसा होशियार जानवर है कि सहज में हाथ नहीं आता था। लोगों ने तरह-तरह के फन्दे ईजाद किए। चूहेदान की तरह षड्यंत्र रखे। इसमें पीछे बकरी बँधी रहती थी। यदि शेर आगे से बकरी को पकड़ने को अन्दर घुसता, तो ऊपर से फट्टा गिरकर शेर को बन्द कर देता था। पिंजरों में फँसे शेरों को लोग भालों से मारते थे। गड्ढों में शेरों को गिराकर मारने का रिवाज सिंगापुर में भी था। कहीं-कहीं लोग शेर की मारी लाश में ज़हर मिलाकर भी शेर को मारते थे। सैंडरसन ने तीन शेर इसी तरह, उनकी मारी लाशों में स्ट्रिकनीन डालकर, मारे। दक्षिण में सरकार शेरों को ज़हर देकर मारनेवाले शिकारी नियुक्त करती थी। कहीं-कहीं शेर की मारी लाश पर लोग अफ़ीम का लेप कर देते थे। शेर अफीम के नशे में आसानी से मार खा जाता था। ग्वालियर में शेर के पीने के लिए जंगल में नांद गाड़ कर लोग उसमें भाँग मिला देते थे।

सिन्ध के अमीर, जो डलहौज़ी के ज़माने में कलकत्ते में नज़रबन्द थे, सुन्दरवन में शेर का शिकार, मचान से नहीं, वल्कि खुद लोहे के पिंजरे में बैठ कर करते थे। सुन्दरवन में मचान बाँधने के योग्य पेड़ ही नहीं मिलते।

जब से बन्दूक व राइफिल चलीं, तब से शेर के शिकार की विधि ही बदल गई। शिकारी लोग, जहाँ शेर के आने-जाने के पग-निशान बहुधा मिलते हों, वहां, शाम के समय, भैंस का साल भर तक का कटरा किसी पेड़ या खूंटे से बाँध देते हैं। कटरे को गरदन से नहीं, बल्कि टाँग से बाँधते हैं। शेर अगर रात में वहाँ से निकला, तो कटरे को मार कर आसपास की झाड़ियों में खींच ले जाता

है । यदि झाड़ियाँ काफी घनी हुईं, तो मारी हुई लाश के पास ही शेर रहता है। अगले दिन शेर को पीछे से हाँक कर निकालते हैं। जहाँ पर झाड़ियों का निकास होता है, वहाँ लोग वन्दूक लेकर मचान पर वैठ जाते हैं। यदि शेर मौक़े से निकलते हुए सामने पड़ गया, तो मार खा जाता है। यदि शेर लाश के पास न रुका, तो लोग पेड़ पर मचान बाँध कर वैठ जाते हैं। यदि शाम को दूसरे दिन आ गया, तो मचान से कारगर गोली लग जाती है।

यदि शेर ने खूंटे से कटरा न खींचा, तो फिर वह उस पर वापिस नहीं आता। यदि शेर ने मचान बाँधने की आवाज़ सुन ली, या मचान पर बैठे शिकारी का खटका ले लिया, तो लाश को छोड़ कर चला जाएगा और चाहे कितना ही भूखा हो, उस रात वापिस नहीं आएगा।

कभी-कभी तो शेर मचान के पास ही वैठा खटका लेता रहता है। जब शिकारी हार मान कर, मचान से उतर कर घर चला जाता है, तो शेर बड़ी निश्चिन्तता से लाश को खाता है। शेलजाम (हलद्वानी) पर एक शेर मुझे मचान से बँगले तक पहुँचाने आता था और फिर वापिस जाकर लाश खाता था।

जिन शेरों पर मचान से गोली चल चुकी हो, वे कभी लाश पर दुबारा नहीं लौटते। कोई-कोई शेर तो उस जगह बँधे कटरे को ही नहीं मारते। ऐसे शेरों के लिए वहुधा गधा या सूअर बाँध दिया जाता है। मैं शेर के लिए, कटरे की जगह, चीतल या सांभर को मार कर पत्तों में दुबका कर रख देता था। एक बार तो मैंने एक शेर की खाल उतार कर उसकी लाश दूसरे शेर के लिए रख दी। शेर हमेशा इन लाशों को उठा कर ले गए। कुछ लोग तो कुत्ते और बकरी तक शेर के लिए वाँध देते हैं।

कुछ लोग तो मचान बाँध जिन्दा कटरे ही के ऊपर वैठ जाते हैं। एक साहब लगातार १७ रात जिन्दा कटरे पर वैठे शेर की प्रतीक्षा करते रहे। अठारहवीं रात जब हार मान कर कटरे पर नहीं वैठे, तो शेर कटरे को मारकर खींच ले गया।

शिकार खेलने वालों को खुद ही कटरा बँधवाना और अगले दिन देखना चाहिए। जंगल के लोग जब कटरा देखने जाते हैं तो खाँस कर जाते हैं। इन्हें डर रहता है कि कहीं शेर लाश पर न हो। इस प्रकार ये लोग शेर को बिदका

देते हैं। कटरा बाँधना, खोलना और उसके मारे जाने का पता लगाना बेआहट होना चाहिए। यदि शेर ने कटरा मार लिया हो तो उसके पंजे के निशानों को ज़मीन पर ध्यान से देखना चाहिए। बड़े गोल पंजे नर के होते हैं, मादा के पंजे कम गोलाई लिए होते हैं। असम और राजस्थान में तो कटरे के गले में एक छोटी घंटी बाँध देते हैं, जिससे यदि शेर कटरे को न देख सके, तो घंटी सुन ले।

कभी-कभी जंगल में शेर की मारी हुई जंगली जानवरों की लाश भी मिल जाती है। कहीं-कहीं शेर गांव के ढोरों को मार लेता है।

हाथी पर बैठ कर शेर को ढूंढ़ने में बड़ा सुभीता रहता है। शेर बहुधा खड़े होकर हाथी को देखता है और गोली चलाने का बड़ा अच्छा मौक़ा देता है। इस काम में हाथी अच्छी तरह सिखाया हुआ होना चाहिए। नौसिखिए हाथी अधिकतर शेर को देखते ही भाग खड़े होते हैं।

शेर की मारी हुई लाश के ऊपर, मचान बांधकर अच्छी तरह उसको पत्तों से ढकना चाहिए। पत्ते सूखकर अक्सर खड़कने लगते हैं। मचान पर आहट जरा भी नहीं होनी चाहिए। किताब का सफा लौटना तक शेर सुन लेता है। दौली (हल्द्वानी) में एक शेर मचान के पास दो रात इसलिए नहीं आया कि शिकारी साहब मचान पर बैठे किताब पढ़ते थे। तीसरी रात जब मचान पर कोई नहीं था, शेर आकर सारी लाश खा गया। लाश रस्सी से बाँध देना आवश्यक है क्योंकि कभी-कभी शेर लाश खींच ले जाता है, और शिकारी मचान पर बैठा ही रह जाता है।

कहीं-कहीं लोग मचान की जगह गहरे गड्ढे में बैठ और उसे चारों ओर से ढक कर, शिकार खेलते हैं।

कैप्टन राइस का कहना है कि शेर को मचान से मारना बोदे आदमियों का काम है। राइस ने ९८ शेर हांकों में मारे जिनमें ३० घायल होकर निकल गए। हांकों में शेर बहुधा घायल हो जाते हैं।

हांका कहीं-कहीं आदमियों से, और कहीं-कहीं हाथियों से होता हैं। शेर सीधा मचानों पर हँकाया जाता है। शेर को दाएँ-बाएँ के पेड़ों पर बैठे लोग इधर-उधर नहीं जाने देते। केवल हल्की ताली से शेर हट जाता है। अगर किसी ओर पक्की रोक लगानी हो, तो सफेद चादर या सफेद कागज लगाने से शेर उधर जाने से रुक जाता है।

जिन शेरों को हांके में फँसने का अनुभव हो जाता है, वे हांके में आगे न वढ़कर उल्टे लौट पड़ते हैं। महाराजकुमार विजयानगरम् के लिए मैं धौलखंड (सहारनपुर) में हाँका करा रहा था। शेर हांके में उल्टा मेरे हाथी की तरफ आया, और जहाँ महाराजकुमार वैठे थे उधर नहीं गया। इसी तरह सूखरौ (सहारनपुर) में हाँका हो रहा था। अफगानिस्तान के अमीर नादिरशाह के भाई अहमदशाह रौ में मचान पर वैठे थे। मैं पैदल हांके में था। जव शेर रौ के किनारे पहुँचा, तो उसकी निगाह मचान पर पड़ गई। शेर ने उलट कर ऐसी छलांग (जस्त) ली कि मेरे दाएँ पर मुश्किल से दस गज पर पड़ा। उस समय मेरे हाथ में केवल एक डंडा था। मगर शेर भाग गया।

कभी-कभी शेर के निकास पर मचान के वजाय शिकारी को हाथी पर विठा देते हैं। हाथी चलते-फिरते मचान का काम देता है।

कटरा वांधने से पहिले, जंगल देखना, रोक के पेड़ छाँटना, व मचान बाँधना अति आवश्यक है। हाँका हल्का होना चाहिए। ज्यादा कोलाहल या शोरगुल में शेर भाग निकलता है और गोली चलाने का अच्छा मौका नहीं देता। पहली ज़ोर की आवाज़ों के बाद, जिनसे शेर उठ जाता है, धीरे-धीरे जंगल हाँकना चाहिए। हांके में शेर न निकले तो थोड़ी देर रुक कर मचानों से उतरना चाहिए। एक वार एक शेर वेरीवाड़े (सहारनपुर) में, मेरी पत्नी के मचान के सामने की झाड़ी में रुक गया। हाँका जव समाप्त हो गया तो हम सव लोग मचानों से उतर आए। मैं जव अपनी पत्नी को उसके मचान से उतारने गया, तो शेर ने एकाएक छलांग (जस्त) ली। मैं जमीन ही पर खड़ा था। खैर हो गई, शेर ने दूसरी छलांग लेकर जंगल की राह ली और मेरी पत्नी की गोली का वार खाली गया।

"रिंगवा" या घेरे का शिकार नैपाल की तराई में चार-पांच सौ हाथियों से वड़े पैमाने पर होता है। चारों तरफ से शेर को घेर लेते हैं, और शेर के इर्द-गिर्द के जंगल का घेरा (दायरा या वृत्त) धीरे-धीरे छोटा करके उसको निकल जाने का मौका नहीं देते। फिर भी शेर अगर घायल हो गया तो, हाथियों को तितर-वितर कर, जिधर चाहे निकल जाता है।

जनवरी १८६१ में जबलपुर के पास गवर्नर-जनरल को रिंगवे में (सौ हाथियों से) फोरसाइथ ने शिकार कराया। शेर तो गोलियों से चलनी हो

गया, और एक गोली फोरसाइथ के हौदे पर भी आ लगी। वह बाल-बाल बचे।

रिंगवे का शिकार खतरे से खाली नहीं होता। हाथियों का चिल्लाना, भागना, शेर का दहाड़ना, और अटरसटर गोली चलाना मामूली बात है। ऐलीसन ने सन् १९२२ में, प्रिन्स ऑफ वेल्स द्वारा नैपाली रिंगवे के शिकार का काफी मनोरंजक वर्णन किया है।

शेर के शिकार में बड़ी सावधानी की जरूरत है। हांका शुरू होते ही जंगल से चीतल, सांभर, सूअर इत्यादि निकलने लगते हैं। इन्हीं जानवरों के पीछे-पीछे शेर निकलता है। राइफिल में गोली भर कर सावधानी से शिकारी को शेर की प्रतीक्षा करनी चाहिए। एक बार सोहनसिंह नेगी ने राइफिल की जस्त ले शेर पर गोली जो चलाई, तो शेर खटका सुन चला गया। वे राइफिल में गोली ही भरना भूल गए थे।

लार्ड लिनलिथगो के मचान के ऊपर सूखरौ (सहारनपुर) में, मैं खुद शेर हांक कर लाया। लाट साहब एक आंख मींचकर शेर का इन्तजार ही करते रह गए और शेर मिची आंख की ओर से निकल गया।

बेलपड़ाव के शेर के हांके में, मैं अभी लोगों को मचानों पर बिठा ही रहा था कि शेर खटका ले एक मचान के नीचे आ गया और गोली चल गई। तब तक हांका शुरू भी नहीं हुआ था। शेर के शिकार में तरह-तरह की घटनाओं की सम्भावना है। इसलिए शिकारी को सदा चौकन्ना रहना चाहिए।

शिकारी को बेखटके बैठना चाहिए। जब तक शेर मौके से सामने न आए, गोली नहीं चलानी चाहिए। भागते-दौड़ते शेरों पर गोली चलाने से शेर ज़ख्मी होकर शिकारी की जान खतरे में डाल देते हैं। गोली चलने पर सब हांके वाले लोगों को पेड़ों पर चढ़ने की बात पहिले ही से तै हो जानी चाहिए। ज़ख्मी शेर का हांके में लौटना हांकने वालों की जान जोखिम में डाल देता है।

शेर गोली खाकर अक्सर दहाड़ता है। एक बार मालधन (रामनगर) के पास एक शेर मेरी गोली खाकर बगैर आवाज़ किए भाग गया, और अगले रोज़ मिला। गोली दिल में लगी थी।

एक हांके में अकसर एक ही शेर निकलता है। फोरसाइथ के हांकों में दो बार ५ शेर और एक बार ७ शेर तक निकले। गोलपाड़ा (असम) में एक

शिकारी ने हाथी से, घंटे भर में, एक जंगल में ५ शेर मारे।

मचान कितना ऊँचा वांधना चाहिए, इस पर शिकारी लोग सहमत नहीं है। मिसेज़ स्मिथीज़ के १४ फुट ऊँचे मचान पर एक ज़ख्मी शेरनी ने कूदकर उनको जमीन पर गिरा दिया था। यदि मिस्टर स्मिथीज़ ठीक समय पर पहुँचकर शेरनी को गोली से न मार देते, तो मेमसाहव को शेरनी खा गई होती। सर चार्ल्स यूल, जो मचान पर वैठे हुए थे, पर भी एक घायल शेर ने हमला किया था। यूल साहव का टोप कुचल गया, कन्धे और छाती में चोट आई, और महीनों अस्पताल में रहे। मगर शेर, जिसके काफी कारगर गोली लग चुकी थी, मचान से गिरकर मर गया। जवलपुर के पास, एक घायल शेरनी ने फाक्स[1] साहव की दाईं टाँग, जो साल के पेड़ पर चढ़ गए थे, ज़मीन से १८ फुट पर चढ़कर पकड़ ली। इनके साथी ने शेरनी को गोली मारकर फ़ॉक्स साहव की जान वचाई।

मचान की ऊँचाई आसपास के पेड़ों पर निर्भर है। मगर मचान कभी १२ फुट से नीचा नहीं बाँधना चाहिए। अच्छा मजवूत वँधा हुआ और पत्तों से खूब ढक हुआ मचान, ऊँचे, खुले और हिलते मचान से अच्छा है। सुन्दरवन में तो लोग लोहे के पिंजरें में वैठकर ज़मीन से शिकार खेलते हैं। वहाँ मचान के लिए अच्छे पेड़ ही नहीं मिलते।

शेर की गर्दन या आगे के हिस्से में गोली लगाने की कोशिश करनी चाहिए। शेर के मुँह की बनावट ऐसी है कि सर की गोली अक्सर अगले हाथ पर पड़ती है। मैंने कई शेरों के चेहरे पर गोलियाँ मारीं। इनमें से ३ तो वहीं गिर गए, और बाकियों ने नाकों चने चववा दिए। अपने ऊपर आते हुए शेर के चेहरे पर, जहाँ तक हो, कभी गोली नहीं चलानी चाहिए।

शेर का पैदल ज़मीन से शिकार कठिन और खतरनाक है। ऐसे अवसर पर शेर के एकाएक सामने आ जाने पर आदमी घवड़ा जाते हैं, और गोली साव-धानी से नहीं चलती। अगर शेर के दिल पर भी गोली लग जाए, तो भी वह शिकारी को मारकर मरता है। घायल शेर को पैदल ढूंढ़ना, साँप से खेलना है।

सवसे दिलचस्प शिकार, 'डुलुए' का है। एक हाथी पर धीरे-धीरे डोलने-फिरने पर शेर वहुधा अपनी मारी लाश के पास मिल जाता है। शेर, हाथी

---

१. एम० ५० फुक्स० फील्ड १९३५

को देख पहले तो हट जाता है, मगर, फिर लौटकर देखता है कि यह क्या वला है ? गोली लगाने को एक नहीं, वल्कि शेर कई मौके देता है। जल्दी करना, घवराना और अटरसटर गोली मारना वेकार और खतरनाक है। ठीक जगह लगी अच्छी एक गोली ही वहुधा कारगर होती है। हाथी वाले के लिए इससे अच्छे शिकार की और कोई विधि नहीं है। सुवह से दोपहर तक का समय डुलुए के लिए सवसे अच्छा है, क्योंकि दोपहर में शेर लेटा हुआ मिलता है। डुलुए में मैंने अक्सर शेर मारे हैं। सुंरई (पीलीभीत) पर तो एक शेरनी जो वोलती हुई जा रही थी, हाथी देखकर पहले तो भाग गई, पर थोड़ी देर वाद फिर लौट आई और हाथी देखने लगी। मेरे हाथी की दिलचस्पी में इस शेरनी ने अपनी जान दे दी।

नैपाल में, जैसे पहले कहा जा चुका है, "रिंगवे" का शिकार होता है। इसमें ४००-५०० हाथी रहते हैं। जिसके पास एक हाथी हो वह डुलुए से शिकार खेल सकता है। मगर जिस पर एक भी हाथी न हो, वह सिवाय मचान पर शेर की मारी लाश पर वैठने के और कुछ नहीं कर सकता। हाँके में पहले तो हाँकने वालों की मज़दूरी, और फिर उनकी जान का खतरा इतना है कि मैं हाँकों के विरुद्ध हूँ। कैप्टन राइस जैसे होशियार शिकारी ने ९८ शेर हाँकों में मारे, मगर उनमें से तीस शेर घायल होकर निकल गए। हाँकों में यदि तीन शेर ज़ख्मी हों तो उनमें से एक मनुष्य भक्षी (आदम-खोर) वन जाता है।

सन् १८०० के आसपास ईस्ट इन्डिया कम्पनी के घोड़ों के रिसालों के अफसर शेर का शिकार घोड़ों पर सवार होकर करते थे। निकलसन ने घोड़े पर चढ़कर तलवार से शेर मारने का दावा किया है। शेर थोड़े फासले तक काफी तेज़ भाग लेता है। मगर शेर का ऐसे खुले मैदान में मिलना जहाँ घोड़े के साथ दौड़ हो सके, कठिन है। शेर वन्द जंगल में रहता है, खुले मैदान में नहीं।

अपनी मौत मरा हुआ कभी कोई शेर मुझे जंगल में नहीं मिला। मेरे तीस वर्ष के अनुभव में केवल एक वार सूखरौ (सहारनपुर) में एक मरा हुआ गुल्दार मिला था जिसने शायद किसी वीमार जानवर को खा लिया था। उन दिनों पके की वीमारी मवेशियों में चल रही थी।

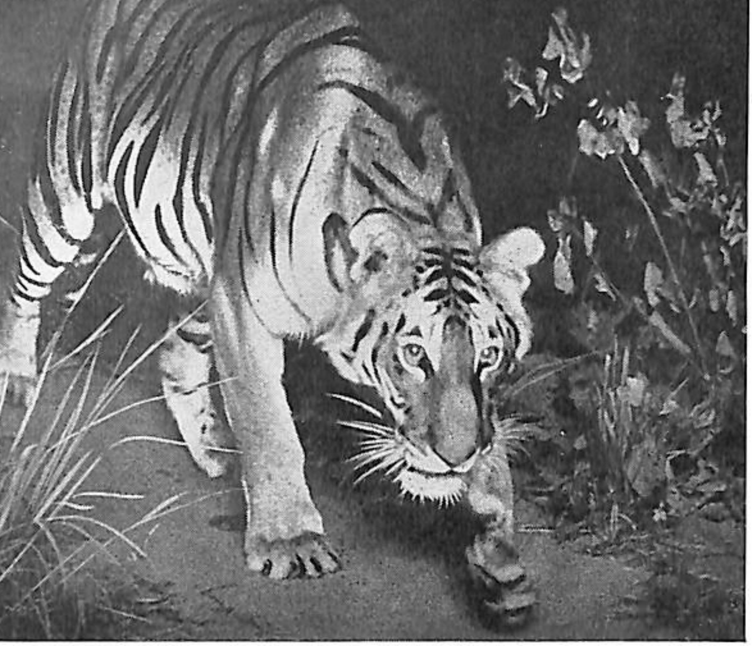

शेर — शिकार की ताक में

सफेद शेर

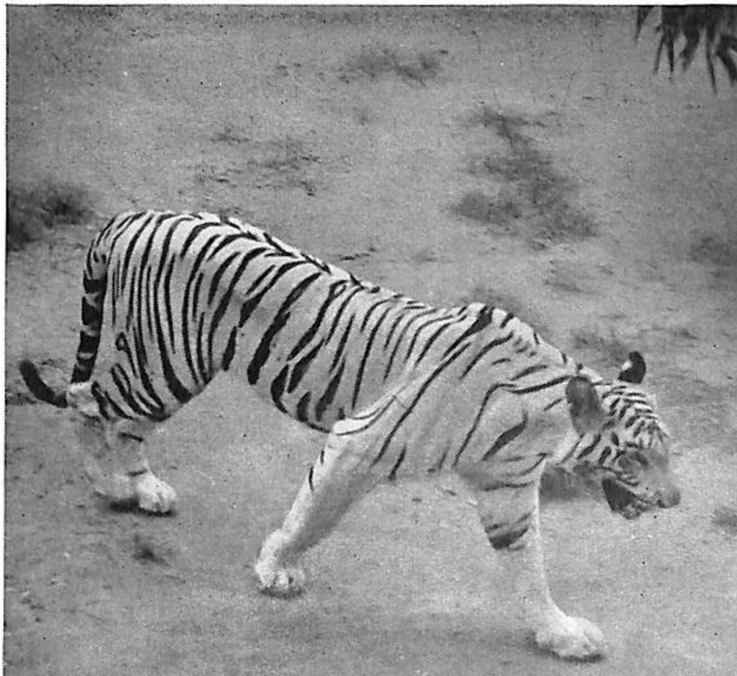

सिंहनी व उसके बच्चे

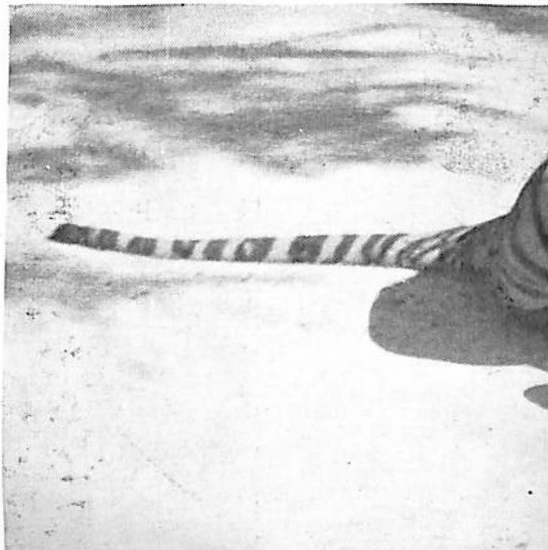

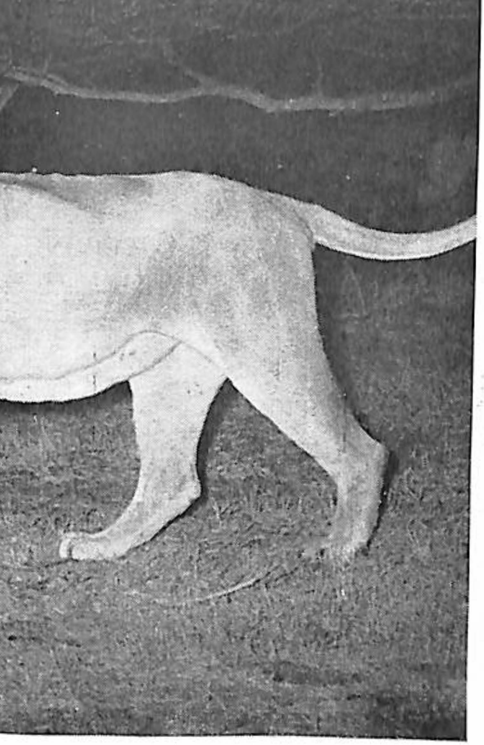

शेर—पानी पर

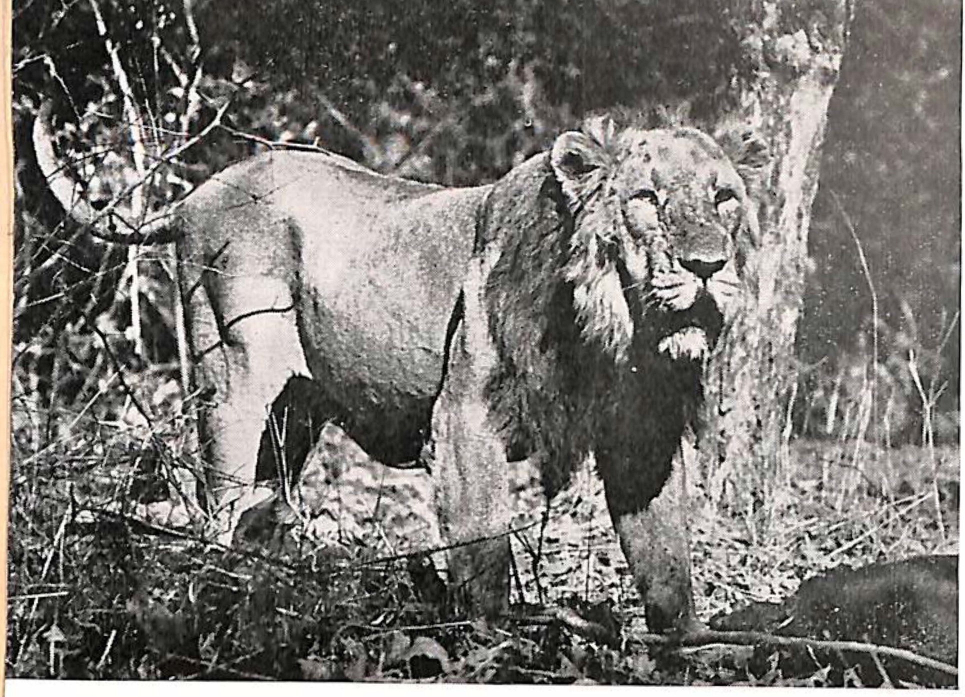

केसरी सिंह

सिंहनी

घायल या ज़ख्मी शेर

भोला-भाला शेर जो ज़रा से खटके पर खिसक जाता है, घायल होने पर क्या कुछ नहीं कर सकता ! सैकड़ों शिकारियों की जान घायल शेरों ने ले ली। सही जगह गोली लगने पर शेर गधे की तरह भद्द से गिर जाता है, मगर ओछी गोली पड़ने पर नाकों चने चबवा देता है ।

जैपसन ने एक घायल शेर का हाल लिखा है जिसने फारेस्ट गार्ड रौजी भील को पेड़ के ऊपर से टाँग पकड़ कर नीचे खींच लिया था । रौजी बहुत देर तक शाख पर चिपटा रहा, पर शेर की ताकत के सामने कोई बस न चला । शेर ने उसकी टाँग खींच कर उसे ज़मीन पर गिरा ही दिया । पेड़ की शाख इस खींचा-तानी में टूट कर लटक गई थी । शेर जैसे ही रौजी के ऊपर झपटा कि पेड़ की शाख टूट कर बड़े जोर से शेर की पीठ पर आ गिरी और शेर इस डाल के अपने ऊपर गिरने से कुछ ऐसा बिदका कि रौजी को छोड़कर चला गया।

घायल शेर चुपचाप झाड़ी में दुबक कर अपना दाँव देखकर हमला करता है । झाड़ी में उसके ओझल रहने के कारण शिकारी पर उसका हमला हमेशा अचानक होता है । मुस्तफाबाद (पीलीभीत) में मुझे घायल शेर का पता तभी चला जब कि वह बिजली की तरह मेरे हाथी के सर के ऊपर आ धमका ।

एक बार सर विलियम स्टेम्प ज्वालासाल (हलद्वानी) में हाथी पर बैठे हांके से लौट रहे थे कि एकाएक एक घायल शेर ने उनका पैर दाँतों से पकड़, उनको नीचे खींच लिया । स्टेम्प साहब ज़मीन पर गिर गए, उनके ऊपर शेर था और भाग्य से इस खींचा-तानी में शेर के ऊपर बौखलाया हाथी गिर पड़ा। हाथी तो फौरन ही उठकर भाग गया, मगर स्टैम्प साहब बहुत देर तक शेर के मुंह में अपना पैर डाले पड़े रहे । हाथी के ऊपर गिरने से शेर दब कर मर चुका था ।

एक बार लालकुआँ (नैनीताल) के पास हम लोग तीन हाथियों से एक घायल शेर को ढूंढ़ रहे थे । मेरा हाथीवान कुछ घबराया हुआ था । शेर एक बीघा भर घास में छिपा बैठा था । मैंने हाथीवान से कहा, 'बढ़ाओ हाथी ।' 'हाथी' शब्द मुंह से निकला ही था कि शेर ने मेरे हाथ पर हमला किया। महावत की टाँग, हाथी का कान और मेरे पैर के बीच में शेर का मुंह था, शेर का एक पंजा (हाथ) हाथी की सूंड़ पर था और दूसरा हाथी की टाँग पर।

बराबर का दूसरा हाथी, शेर की दहाड़ से ऐंसा डरा कि उस पर सवार श्री विस्ट गद्दे के समेत हाथी के पेट पर आ लगे। मेरे हवाई फायर करने पर, शेर हाथी को छोड़ कर फिर घास में जा बैठा। दबाव डालने पर शेर ने मेरे हाथी पर दुबारा हमला किया। इसके बाद उसके कारगर गोली लग गई।

घायल शेरों की कहानियाँ अनगिनत हैं। शेर के हमले पर बहुधा हाथी भाग पड़ता है और यदि वहाँ जंगल हुआ तो हाथी पर सवार शिकारियों को पेड़ों की डालों से काफी चोट आ जाती है। हल्द्वानी में दौली नामक जगह में श्री सेन घायल शेर के हमले से भागते हाथी से घबरा कर ज़मीन पर कूद पड़े और उनके काफी चोट आई।

एक गुर की बात यह है कि घायल शेर यदि आदमी व हाथी पर चिपट जाए तो कभी उस पर गोली नहीं चलानी चाहिए। शेर इतनी तेज़ी से अपनी जगह बदलता है कि गोली अक्सर उसके न लगकर, आदमी या हाथी के लग जाती है। थोड़े दिनों की बात है कि मेजर फ्रेजर और सईद ने हाथी पर चिपटे शेर के जो गोली मारी, तो हाथी ही के लगी और शेर भाग गया। एक और शिकारी ने इसी तरह हाथी पर चिपटे शेर पर जो गोली चलाई तो शेर व हाथी दोनों ही मर गए।

कभी-कभी हाथी अपनी सूंड़ से एक तरह की आवाज़ कर शेर को बता देता है, मगर हमेशा नहीं। मुस्तफाबाद (पीलीभीत) में मेरा हाथी सीधा शेर के मुंह में चला गया और शेर के पास होने की उसको तभी खबर लगी, जब शेर उसके सर पर आ कूदा। मगर बुकसार (कालागढ़) में मेरी हथिनी ने अपनी सूंड़ से शेर का एक झाड़ी में होना ठीक-ठीक बता दिया। हाथी शेर को तभी बता सकता है, जब वह पहले एक बार उसे देख ले। मुस्तफाबाद में दुबारा मेरे हाथी ने उसी शेर को ठीक-ठीक बता दिया था।

सुरई (पीलीभीत) के पास एक घायल शेर ने राजा कुटहार के महावत को हाथी पर से खींच लिया। सर जार्ज यूल के शिकार में इसी तरह एक घायल शेर ने महावत को 'टाँग पकड़ कर' हाथी से खींच लिया था। यूल साहब के ही शिकार में एक बार एक घायल शेर हौदे पर आ कूदा था।

घायल शेर की दहाड़ व हमले पर हाथी ऐसा बिदक कर भागता है कि उस पर बैठे शिकारियों की जान खतरे में पड़ जाती है। नर हाथी तो अक्सर

शेर पर हमला भी कर बैठता है। घायल शेर हाथियों की कोई परवाह नहीं करता। महावत को खींच लेना, सवारों को गिरा देना, हाथी का बिदक कर भागना और कभी-कभी गिर जाना यह सब उस समय की मामूली बातें हैं। नैपाल में जहाँ चार-पाँच सौ हाथी शेर को घेर कर मारते हैं, वहाँ काफी लोगों के चोटें आती हैं। जिधर भी शेर हमला कर बैठता है, हाथी भागते ही दिखाई देते हैं। बलरामपुर के महाराज सर दिग्विजय सिंह की जान नैपाल के रिंगवे शिकार में ही चली गई थी।

हाथी या आदमी से चिपटे हुए शेर को भगाने का एक ही उपाय है और वह है हवाई फायर। गोली की आवाज़ से शेर घबरा कर हमेशा भाग पड़ता है।

घायल शेर को पैदल ढूंढ़ना कोई हँसी-खेल नहीं है। इसमें कम-से-कम हाथी के बिदकने का खतरा तो नहीं है। पैदल शिकार को बहुत धीरे-धीरे फूंक-फूंक कर कदम उठाना चाहिए। हर झाड़ी में शेर समझना चाहिए। शिकारी और उसके साथियों को याद रखना चाहिए कि आदमी की आवाज़ पर घायल शेर तीर की तरह आता है। मुंह से बोलना शेर के हमले को अपने ऊपर बुलाना है। टिक्करपारा (उड़ीसा) में, मैंने एक घायल शेर को शिकारियों के साथ पैदल ही बड़ी आसानी से ढूंढ़ लिया था।

दस-बीस भैंसें यदि मिल जाएँ तो घायल शेर को ढूंढ़ने में सुभीता होता है। दतिया के महाराज सर भँवरपाल सिंह कुत्तों से ज़ख्मी शेर को ढूंढ़ लेते थे।

शेर से जो आदमी घायल हो जाते हैं उनमें बहुत कम बचते हैं। शेर की छोटी-से-छोटी खुरेंच से भी ज़हर फैल जाता है। शिकार में हमेशा पुटास, मर्कोक्रोम और आयोडीन साथ रखनी चाहिए। तुरन्त ही दवाई लगा देने से ज़हर नहीं फैल पाता। १९४१ ई० की अप्रैल में माला (पीलीभीत) के पास एक घायल शेर ने एक आदमी का कूल्हा ऐसा चबाया था कि वह अस्पताल में दो-तीन दिन ही में मर गया। शेर के हमले से घायल लोगों की अंत में मौत ही होती है। पर कभी-कभी लोग क़ब्र से वापिस भी आ जाते हैं।

एक मर्तबा एक इंजीनियर साहब हाथी पर सवार घायल शेर को ढूंढ़ रहे थे। शेर ने एकाएक हाथी पर हमला कर दिया। हाथी बिदक कर ऐसा तड़पा और गिरा कि इंजीनियर साहब शेर की पीठ पर जा गिरे। हाथी तो उठ कर तुरन्त ही भाग गया, पर शेर ने साहब का कन्धा मुंह में लेकर उन्हें जंगल की

ओर खींचना शुरू किया। थोड़ी दूर खींचने के बाद शेर साँस लेने को बैठ जाता था, और यदि वे ज़रा भी हिलते थे तो वह बिल्ली की तरह उनके पंजा मारता था। इंजीनियर साहब के होश-हवास ऐसे गायब थे कि शेर जब उनको कन्धे से फिर खींचता था तो मौत के डर के सामने दर्द भूल जाते थे। शेर जब जंगल में उनको अन्दर खींच लाया, तो उनके इतने पास बैठा कि उसके दिल के धड़कने की आवाज़ उन्हें सुनाई देती थी। इंजीनियर साहब को अपनी पेटी में बँधे पिस्तौल की याद आई। मगर डर यह था कि अगर जरा भी हिले तो शेर पंजा मारेगा। आखिर हिम्मत कर पिस्तौल पेटी से खींच ही ली। शेर गुर्राया पर उसका मुंह दूसरी ओर था। पिस्तौल उसके दिल पर लगाकर दो गोली साहब ने चला ही दी। शेर गोली खाकर दहाड़ा। उसके बाद इंजीनियर साहब को होश हस्पताल ही में आया। इंजीनियर साहब और उनकी यह कहानी शेर सम्बन्धी साहित्य के लिए बच गई।

शेर गोली खाकर कभी-कभी बेहोश हो जाता है। ढेले (रामनगर) के पास एक शेर को मैं मरा समझ कर मचान से उतर आया था और भीमसिंह शिकार के साथ उसको झाड़ी में पड़ा देख आया था। थोड़ी देर बाद जब दुबारा हम लोग उसे देखने गए, तो उसने ऐसे जोर से डाँट दी कि हम लोग भागते ही नज़र आए। इलाहाबाद के एडवोकेट मि० डिलन की लाश उनके मारे हुए शेर ही के पास मिली। सर माण्टेग्यू जिराडं जिन्होंने १७० शेर मारे थे, एक बार मरे शेर के धोखे में बाल-बाल ही बचे। एक सिपाही ने मद्रास प्रान्त में जीवित शेर को मरा समझकर उसे नापने में अपनी जान ही दे दी। कलकत्ते के एक प्रसिद्ध शिकारी, जिन्होंने कई शेर मारे थे, एक शेर को मरा समझ कर अपनी जान खो बैठे।

'शेर मरा तब जानिए जब तेरही हो जाए'। चाहे शेर को मरा ही समझो तो भी उसके 'तेरही' को एक गोली चलाना अति आवश्यक है। आदमी के लिए शेर तो ओझल रहता ही है, पर शेर को भी आदमी तब तक समझ में नहीं आता जब तक कि वह हिले नहीं। आदमी अगर साँस रोककर खड़ा हो जाए तो शेर को न दिखाई देगा। हाथी, गाड़ी, मोटर या ऊँट पर सवार आदमी, शेर की समझ में नहीं आता। धनारीघाट (पीलीभीत) में एक शेर संध्या के समय सड़क पर जा रहा था। वह मेरी मोटर पास आते देख

जंगल में चला गया। मैंने मोटर खड़ी कर ली और उसका इंजिन चलने दिया। शेर की समझ में नहीं आया कि यह क्या है। थोड़ी ही देर में शेर लौट आया, और एक पेड़ के पीछे खड़े होकर देखने लगा कि यह क्या बला है। अपनी उत्सुकता में उस ने गोली खा जान खो दी।

लोगों का कहना है कि शेर और जानवरों की तरह, आदमी को देखकर भौंचक्का हो जाता है। आदमी की ऊँचाई, दो टाँगे, कपड़ों के रंग, और उसके तीर, कमान, भाले, बन्दूक. टार्च और शोर जानवरों को अजीब मालूम होते हैं।

आदमी को शेर बहुधा खड़े होकर देखता है क्योंकि जंगल में कोई चीज़ सफ़ेद नहीं होती। शेर सफ़ेद रंग से घबराता है।

कभी-कभी तो घायल शेर आबादी में आ जाते हैं। एक बार एक घायल शेर टनकपुर (पीलीभीत) के पास एक गाँव के झोंपड़े में घुस गया था जिसमें एक बच्चा सो रहा था। लोगों के शोर व हुल्लड़ से वह जंगल को वापस चला गया। एक बार कुरनूल (मद्रास) के जंगलों में एक शेरनी संध्या के समय एक बँगले के एक कमरे में घुस कर मेज के नीचे आ बैठी। वेंकटरामन ऐयर जब कुर्सी पर बैठ दफ्तर का काम करने लगे, तो उनका पैर शेरनी के ऊपर पड़ा। जब घबराए हुए कंसर्वेटर साहब बाहर आए तो पहले तो उनकी बात का किसी ने विश्वास ही नहीं किया। बाद को वह शेरनी मारी गई। खाल निकालते समय यह पता चला कि उसके पेट और पंजों पर घाव थे, जिनमें कीड़े पड़ गए थे।

शेर और आदमी

शेर की खाल, मूँछों के बाल, दाँत, नाखून, गोश्त, व चर्बी सब ही काम में आते हैं। चीनी लोग शेर के गोश्त के मनमाने दाम लेते हैं, क्योंकि उनका दृढ़ विश्वास है कि इसके खाने से आदमी शेर की तरह बहादुर और निडर हो जाता है। जंगलों के आसपास के गाँवों में, हमारे देश में भी, लोग शेर का मांस इसीलिए माँगते हैं। शेर की चर्बी गठिया के लिए अक्सीर दवा बताई जाती है। लोग शेर के नाखून चाँदी-सोने में मढ़कर तावीज़ की तरह पहनते हैं। शेर की पूंछ के बाल यदि पीस कर किसी को खिला दिए जाएँ तो वे हीरे की कनी की तरह आदमी की आँते काट देते हैं। पूंछ के बाल भी तावीज का काम देते हैं।

शेर की बांह में एक तीन या चार इंच की 'सन्तोष हड्डी' होती है। इसे अंग्रेज लोग 'लकी-बोन' कहते हैं और सोने में मढ़ाकर पहनते हैं। शेर की खाल यदि अच्छी तरह बनाई जाए, तो बरसों कालीन का काम देती है। शेरनी का दूध आंखों की कई बीमारियों की अक्सीर दवा बताई जाती थी।

शेरों के सम्बन्ध में गाँवों में तरह-तरह की दन्तकथाएँ प्रचलित हैं। शेरों का देवी-देवताओं, कब्र या मज़ारों और भूत व आसेब से चोली-दामन का साथ है। गांव के शिकारी व शेर के खोजा, शेर के शिकार से पहले देवता पर बकरी चढ़वाते हैं। पीलीभीत में जहाँ नहर फूटती है, उसके पास एक मज़ार का शेर है, जो मर ही नहीं सकता। माला के सैय्यद बाबा को बिना बकरी चढ़ाए शिकार खेलना ही बेकार है। मध्य भारत में भील व गोंड शेर की पूजा करते हैं। बैजनाथ के चार मनुष्य भक्षी शेर मन्दिर ही के समझे जाते थे। ये शेर मवेशियों को छोड़ आदमियों को ही खाते थे। कहीं-कहीं तो शेर के हिस्से का गोश्त गांव के लोग जंगल में रख आते हैं। गांव पर अगर बाघ लग जाता, तो बहुधा उस पर बकरी व बैल, और कभी-कभी तो आदमी भी चढ़ाए जाते थे।

शेर अगर गोली से बच गया तो वह शेर 'भूत' हो गया। शेर के मारे आदमियों का भूत, शेर को कहीं-कहीं तो बचाता है, और कहीं-कहीं मरवाता है। लालकुआं और किला के बीच में मेरा एक बार नगले पर कैम्प था। नगले से तीन मील मैं स्वयं प्रतिदिन शेर के लिए कटरा बाँधने जाता था, और सवेरे वह कटरा मुझे नगले के रेस्ट हाउस पर चरता मिलता था। लोगों का कहना था कि कटरे को 'भूत' खोल देता है। जब कटरा बदलकर बांधा तो शेर ने एक दिन उसे मार लिया। मैं जब इस कटरे की लाश पर बैठा तो जंगल में अँधेरा होते ही, एक भयानक आवाज करती हुई कोई चीज़ मेरे पेड़ पर चढ़ कर मेरे ऊपर की शाख पर आ बैठी। जब मैंने हाथी बुलाया और टार्च से देखा तो कुछ दिखाई न दिया। वहाँ के खत्तेवालों का यह कहना था कि जंगल में एक 'आसेब' (भूत) है, जो शेर को बचाता है। शेर और भूत की ऐसी की बहुत-कहानियां हैं।

गांव वाले शेर को खेतों का रखवाला समझकर बहुधा मारने नहीं देते। जिस गांव के आस-पास शेर आता-जाता है, वहाँ पर जंगली जानवर खेतों का कम नुकसान करते हैं। कहीं-कहीं शेर गांव के कसाई का काम देता है। उसके

मारे हुए जंगली जानवरों का गोश्त गाँववाले अपने खाने के लिए उठा लाते हैं। शेर, गाँववालों से कभी कुछ नहीं कहता। छोटे-छोटे चरवाहे भैंस पर चढ़े अक्सर शेर को शोर मचाकर भगा देते हैं।

शेर दिन में आँख से ओझल रहता है। गाँववालों को उसके मारे जानवरों या उसके पंजों के निशान से ही उसका पता चलता है।

शेर कभी किसी पर वार नहीं करता, इसलिए जंगल के आस-पास के लोग उसे देवता की तरह मानते हैं। यदि कभी उसने मवेशी (ढोर या पशु) मार भी लिए तो संतोष कर लेते हैं। अपने गाँव के शेर को लोग तरह-तरह के नाम से पुकारते हैं--टुन्टा, बघटा, देवता इत्यादि। कहीं-कहीं लोग शेर को देवता समझ उसका नाम नहीं लेते।

सवेरे या संध्या के समय आते-जाते राहगीर कभी सामने पड़ गए तो शेर खटका पाकर हट जाता है। इसी कारण बहुत कम आदमियों को शेर देखने का मौका मिलता है। शारदा नहर (वाईफ़रकेशन, पीलीभीत) पर एक बार तो मैं और मेरा शिकारी पूरन, शेर की मारी लाश ढूंढ़ते-ढूंढ़ते शेर के ऊपर ही जा पहुँचे। शेर अपनी लाश खा रहा था। हम लोगों को देख कर गुर्राया, और हम लोग माफी माँग कर चले आए।

एक बार सूखरौ के मृगस्रोत (सहारनपुर) में मैं और मेरा शिकारी दलीपसिंह एक पहाड़ी पर जा बैठे। नीचे नाले में शेर के पंजों के निशान थे। हम लोगों का ख्याल था कि शेर नीचे के नाले में जिस रास्ते गया था, उसी रास्ते वापस लौटेगा। सूर्य डूबते ही काकड़ बोला। उसके बाद दो आवाजें सांभर ने दीं। क्या देखते हैं कि शेर बजाए नीचे के नाले में निकलने के, पहाड़ी की धार-धार हम दोनों के सर के ऊपर आ खड़ा हुआ। मगर मुंह उसका दूसरी तरफ था, पूंछ हमारी तरफ। उसने खड़े होकर पूंछ जो हिलाई तो दलीपसिंह के साफे पर लगी। शेर दूसरी ओर नीचे उतर गया, मगर वे दो मिनिट, जब तक वह खड़ा रहा, एक युग की तरह बीते।

बात असली यह है कि शेर के बराबर कोई सीधा जानवर नहीं है। सच पूछिए तो सबसे ख़तरनाक जानवर आदमी ही है।

शेर का बचाव

प्राचीन काल में शेर समस्त भारत में फैले हुए थे। हाँ, पश्चिमी भारत और पंजाब में शेर नहीं पहुँचा। शेर ने यमुना पार नहीं की। बंगाल, असम, उत्तर प्रदेश, मध्य भारत में शेरों ने कुहराम मचा रखा था। लोग, गांवों को शेरों से बचाने के लिए, उनके चारों ओर लट्ठ गाड़ कर घेरा बना लेते थे। गोरखपुर में, जहाँ अब शेर नाम को नहीं है, लोग आग जलाकर अपने को शेरों से बचाते थे। मेरठ में रुई की खेती शेरों ने बन्द कर दी थी। सुन्दरवन में शेर मवेशी या ढोरों की कमी के कारण मनुष्य-भक्षी (आदमखोर) हो गए थे। सन् १८५० तक मध्यप्रदेश के मंडला ज़िले में शेरों से आदमी और मवेशी दोनों ही काफी संख्या में मारे जाते थे। दक्षिण में मद्रास प्रान्त में शेरों को लोग ज़हर देकर मारते थे।

शेर का असली शिकार बन्दूक और राइफिल के आविष्कार से आरम्भ हुआ। ईस्ट इंडिया कम्पनी के फौज के अफसरों ने इतने शेर मारे कि उसकी नसल ही बहुत जगहों से मिटा दी। राजा-महाराजों ने भी सैकड़ों शेर मारे। उधर आबादी बढ़ती चली गई। जंगल जो शेर को आश्रय देते थे, बड़े वेग से कटने लगे। सड़कें खुल गईं जीप चल गई जो शिकारी को शेर के मुंह तक पहुँचा देती है। अठारहवीं व उन्नीसवीं सदी में सौ से ऊपर शेर मारने वाले सैकड़ों ही लोग थे। एक ऐंग्लो-इण्डियन जज ने सन् १८०० तक ३५० शेर मारे। ज्यार्जी पामर ने १८३२ से १८६२ के बीच एक हज़ार शेर मारने का दावा किया है। १८३३ और १८६४ की अर्थात् दो वर्षों की ग्रीष्म ऋतुओं में गार्डन कमिंग ने नर्मदा नदी के किनारे के जंगलों में ७३ शेर मारे। १५ साल के शिकार में नर्मदा के शेर नष्ट हो गए। नाइटिंगेल ने हैदराबाद में १८६८ तक ३०० से अधिक शेर मारे। कप्तान राइस ने १८५० से १८५४ तक नीमच के आस-पास १५८ शेर मारे और घायल किए जिनमें ३१ बच्चे थे। किसी मिलिटरी छावनी के पचास मील के दायरे में कोई शेर कहीं न बचा।

रियासतों और रजवाड़ों में भी हजारों ही शेर मारे गए। ग्वालियर के सिन्धिया महाराज ने ८०० शेर खुद मारे और ६०० शेर अपने मेहमानों से मरवाए। महाराज कूचविहार ने अपने ३७ वर्ष के शिकार में ३६५ शेरों का शिकार किया।

पिछले दिनों महाराजा सरगुजा मुझे बतलाते थे कि उन्होने १,२०० से ऊपर ही शेर मारे हैं। महाराजकुमार विजयनगरम् कोई दो सौ से ऊपर शेर मार चुके थे।

नैपाल की तराई में, जहाँ चार-पाँच सौ हाथियों से रिंगवे का शिकार होता है, अनगिनत शेर मारे जाते हैं। काठमाण्डू में कुछ वर्ष हुए, मुझे एक राना मिले थे, जिन्होंने कहा कि उनके पास केवल बीस ही हाथी हैं और इसलिए वे एक बार २०-२५ से अधिक शेर नहीं मार सकते !

पहले चाहे कितने ही शेर रहे हों, पर अब घने जंगलों तक में शेर गिने-चुने रह गए हैं। सहारनपुर शिवालिक में, जहाँ कभी शाहजहाँ शिकार खेलता था और जहाँ के चार अच्छे जंगल गवर्नर-जनरल के शिकार के लिए सुरक्षित थे, शेर धीरे-धीरे इतने कम हो गए थे कि, मेरे कहने से, उत्तर प्रदेश सरकार ने राजा जी के नाम से इन जंगलों को पशु-विहार बना कर वहाँ शेर का शिकार बिल्कुल बन्द कर दिया।

कहने को अंग्रेज़ों के राज्यकाल की अपेक्षा अब शेर का शिकार कुछ कम है। फिर भी लगभग ३०० शेर हमारे देश में हर साल मारे जाते हैं। इससे भी शेर के नष्ट होने का इतना भय नहीं है जितना कि जंगलों के कटने से, और जिन जानवरों पर वह रहता है उनके कम होने से। जगह-जगह जंगल काटकर लोग खेती बढ़ा रहे हैं। चीतल-साँभर व सूअर, जिन पर शेर का जीवन निर्भर है, लोग बुरी तरह से मार रहे हैं। यदि जंगल, जो शेर को आश्रय देता है, वही कट गया तो शेर कहाँ रहेगा ? और, यदि जंगली जानवर, जिन पर शेर का जीवन निर्भर है, वे ही न रहे तो शेर हमारे देश में थोड़े ही दिनों का मेहमान है।

क्या हमारे जगत्-प्रसिद्ध जंगली जानवरों को स्वतंत्र भारत आश्रय न देगा ? क्या गौतम की जन्मभूमि में, बेज़बान जानवरों को जीवन की भिक्षा भी न मिलेगी ? हमारे देश में कई जंगलों में वह स्थिति पहुँच गई है कि छोटे-बड़े जानवरों का शिकार दस वर्षों के लिए बिलकुल बन्द कर दिया जाना चाहिए।

२. सिंह

सिंह को भारतवर्ष में लोग कई नामों से पुकारते हैं। केहरी, केसरी, हरि, बबर-शेर इत्यादि से तो सभी लोग परिचित हैं, पर संस्कृत काव्य में इसके अनेक नाम हैं, जैसे हर्यक्ष, मृगेन्द्र, मृगरिपु, मृगाशन, पारीन्द्र, कण्ठीरव, पंचशिख, शार्दूल, शैलाट, भीमविक्रम, मृगराट्, मरुत्लपव नखरायुध, महानाद, पंचमुख, नखी, विक्रान्त, केशी, मृगपति इत्यादि। अरब देश में, जहाँ अब सिंह नाम को भी नहीं है, इसके १०८ नाम हैं।

सिंह का रंग ऊँटिया, सपाट, देखने में भोला-भाला, छोटी झबरी पूंछ, और नर के गले में अयाल रहती है। प्राचीन काल में सिंह समस्त उत्तरी खंड में जगह-जगह खुले मैदानों में पाया जाता था। इससे सब लोग परिचित थे। हमारे वेद-शास्त्रों तथा अन्य प्राचीन पुस्तकों में बहुधा सिंह की चर्चा की गई है।

कालिदास ने रघुवंश के द्वितीय सर्ग में लिखा है कि जब नंदिनी को सिंह ने दबोच लिया तब दिलीप ने देखा कि—

स पाटलायां गवि तस्थिवांसं धनुर्धरः केसरिणं ददर्श।
अधित्यकायामिव धातुमय्यां लोध्रद्रुमं सानुमतः प्रफुल्लम्।

धनुषधारी राजा दिलीप ने देखा कि उस लाल गऊ पर बैठा हुआ सिंह ऐसा लग रहा है जैसे गेरु के पहाड़ के ढाल पर बहुत से पीले फूलोंवाला लोध्र का पेड़ फूल रहा हो।

समस्त संसार के साहित्य में, यहाँ तक कि बाइबिल और कुरान में भी, केवल सिंह का जिक्र है। दुर्गा का वाहन सिंह ही है। हमारे मंत्रों में जहाँ-तहाँ सिंह ही विराजमान है।

सिंह का विस्तार

सिंह समस्त अफ्रीका, पश्चिमी एशिया व दक्षिण-पूर्वी योरुप में पाया जाता था। पिछले २०० वर्षों में, जब से बन्दूक और राइफल का आविष्कार

हुआ, सिंह का विस्तार धीरे-धीरे कम होता गया। अठारहवीं शताब्दी तक सिंह समस्त पश्चिमी-उत्तरी और मध्य भारत में पाया जाता था। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शिकारियों ने इसको १०० वर्षों में नेस्तनाबूद कर दिया।

मुगल बादशाहों के सिंह के शिकार का जिक्र कई जगह है। उस ज़माने के शिकार की कुछ तसवीरें भी हैं।[१] बाबर के सिन्धु नदी के किनारे व बनारस के पास सिंह मारने का हाल 'बाबरनामे' में लिखा है (१५२६-३०)। कोई ताज्जुब नहीं, उसका नाम बाबर, शेर-बबर मारने के कारण ही पड़ा हो। उसका असली नाम तो जहीरउद्दीन मुहम्मद था। आईन-अकबरी में अब्बुल फज़ल ने भी सिंह के शिकार का जिक्र किया है। एक बार जहाँगीर ने लाहौर के पास अकबर के साथ सिंह का शिकार किया और लिखा कि उन दिनों वहाँ कोई बीस सिंह थे। सन् १६१७ में ज़हाँगीर ने मालवा में एक सिंह मारा था। जहाँगीर के दरबार में इंगलैंड का राजदूत सर टामस रो आया था। उसने भी सिंह के शाही शिकार का ज़िक्र किया है।

बिशप हेबर (१८२४) ने रामपुर, मुरादाबाद, कंकाली टीला, मथुरा में सहारनपुर व लुधियाने में सिंहों के शिकार का हाल लिखा है।

सहारनपुर व लुधियाने में सिंहों के शिकार का हाल लिखा है। उन्नीसवीं शताब्दी के शिकारी मासिक-पत्रों की छानबीन से जान पड़ता है कि सिंह जहाँ-तहाँ हरियाना, सागर, दमोह, बड़ौदा, पाटन, नर्मदा के किनारे, ग्वालियर, खानदेश व गुजरात में मिलते थे। फौरसाइथ ने लिखा है कि एक सिंह सागर ज़िले में १८५१ में मारा गया था। सन् १६२२ में शेरगढ़ (कोटा) में एक सिंह मारा गया। सम्भव है कि यह ग्वालियर का शेर हो।[१]

भारत से सिंह अब लुप्त हो गया है। पुराने ज़माने में केवल राजे-महाराजे ही इनका शिकार करते थे। सिंह मारने की किसी और को आज्ञा न थी। मरहठों और सिक्खों का राज्य ईस्ट इंडिया कम्पनी के हाथ में आते ही इस देश से सिंह का अस्तित्व ५० वर्ष में मिट गया।

अब कुछ गिने-चुने सिंह केवल जूनागढ़ के पास गीर के जंगल में रह गए हैं। इस जंगल का रकबा कोई ५५० वर्गमील होगा। बीसवीं शताब्दी के आरंभ

१. ग्वालियर में कुछ शेर अफ्रीका से लाए गए थे।

में भारत के वाइसराय लार्ड कर्ज़न के कहने पर नवाव साहब जूनागढ़ ने इस जंगल में सिंह की रक्षा करके इसको भारत के लिए बचा लिया। लार्ड कर्ज़न ने, जिनके शासनकाल में बंगाल में स्वदेशी आन्दोलन आरम्भ हुआ, हमारे देश की ऐतिहासिक इमारतें ही नहीं बचाई, बल्कि सिंह को भी जीवित रखा। सन् १९०० में कोई ३० सिंह (नर, मादीन व बच्चे) जूनागढ़ में रह गए थे। सन् १९५० में जब विण्टर ब्लायथ ने इनकी गिनती की, तो इनकी संख्या २२७ तक पहुँच गई थी। इनमें से ४-५ सिंह हर साल खास-खास लोग आज्ञा लेकर मार भी लेते हैं। मगर आम तौर पर सिंह का शिकार मना है।

भारतवर्ष में सिंह, सब के सब, केवल जूनागढ़ ही में हैं। यदि उनमें कोई बीमारी फैल गई, या झगड़ा व लड़ाई हो गई तो सिंह की खैर नहीं। हमारे साहित्यिक, ऐतिहासिक और राष्ट्रीय गौरव के प्रतीक के इस आधार की रक्षा के लिए मैसूर में (१९५२) यह प्रस्ताव पास किया गया कि सिंह को दो-चार और जगहों में भी आश्रय दिया जाए। इंडियन बोर्ड ऑफ वाइल्ड लाइफ (जंगली जानवरों का रक्षक समाज) का यह सुझाव भारत-सरकार ने मान लिया और सिंह के लिए एक दूसरा स्थान स्थापित करने का प्रयत्न किया। श्री सम्पूर्णानन्द जी की विशेष कृपा से बनारस के पास चन्द्रप्रभा के जंगल में जूनागढ़ के ३ सिंह छोड़े गए। इनमें एक नर व दो मादीन थीं। इनका हाल आगे दिया गया है।

सिंह व साहित्य

हमारे साहित्य और काव्य में सिंह की काफी चर्चा है। ऐसा जान पड़ता है कि धारीदार शेर तो भारत में पूर्वी उत्तरी कोने से आया, और सिंह पश्चिमी-उत्तरी कोने से। जब आर्य-आक्रमण भारत पर हुआ, तो जगह-जगह आर्यावर्त में सिंह पाया जाता था। सिंह के आने का रास्ता अफगानिस्तान होकर नहीं बल्कि सीरिया, ईराक़, ईरान, बलोचिस्तान व सिन्ध होकर है। सिकन्दर की फौज भारत से इसी रास्ते से यूनान वापस गई थी और इसको सिंहों ने काफी सताया था। (३२७ ई० पू०)

लंका में न तो सिंह पहुँचा न धारीदार शेर। इसे सिंघल द्वीप इसलिए कहते हैं कि इसमें गुल्दार (मराठी : सिंघल) पाया जाता है।

सिंह की काफी चर्चा हमारे शास्त्रों और अन्य धार्मिक पुस्तकों में है। कालिदास के नाटकों में सिंह की कई उपमाएँ हैं। हमारे मन्दिरों में सिंह जगह-जगह स्थापित है। श्री जगन्नाथ जी के सिंह—दरवाज़े पर और विजय-नगर के सिंहाचलम् पर सिंह विराजमान है। कुषाण मन्दिरों में भी सिंह की मूर्तियाँ थीं। (कंकाली टीला, मथुरा-७८ ई०)। बाबर ने जो फाटक जेरूसलम में बनवाया था, उस पर सिंह व चूहा दोनों खुदे हुए थे। सिंह देवी का वाहन है। विष्णु का नरसिंह अवतार सिंह के लिए गौरव की बात है। धारीदार शेर जो बन्द अगम जंगलों में रहता है, उसे लोग कम जानते हैं। उसकी चर्चा केवल बौद्ध साहित्य में है। अश्वघोष के नाटक "सौंदरानन्द" में सिंह और शेर दोनों ही की उपमाएँ हैं।

समस्त संसार के साहित्य में केवल सिंह ही की चर्चा है। बाइबिल में जरमिया की भविष्यवाणी में कहा गया था कि यहूदियों को सिंह खाएगा। डेनियल को एक सिंह के मुँह में डाल दिया गया था। रोमन राजाओं ने ईसाइयों को सिंह के मुँह में डालना अपना मनोरंजन बना रखा था। मिश्र में लोग सिंह ही को मानते थे।

अरबी में सिंह के १०८ नामों में एक नाम 'असद' है। मुहम्मद साहब के दामाद अली का नाम असदउल्ला खाँ था। फारसी में जिसमें बाबर, अकबर व जहाँगीर के शिकारों का हाल लिखा है, शेर, शेर-बबर इत्यादि में बड़ा धोखा होता है और यह पता नहीं चलता कि धारीदार शेर से मतलब है या सिंह से। कलकत्ते व बम्बई के अजायबघरों में जो मुग़लों के शिकार की तसवीरें हैं, उनसे पता लगता है कि बबर (शेर) से मतलब सिंह से था, धारीदार शेर से नहीं।

फ़ारसी में शेर व सिंह में बड़ा धोखा होता है। कुछ लोगों का कहना है कि नौशेरखाँ आदिल का नाम नौ शर मारने पर पड़ा। पर फारसी में नौ के मानी 'नए (नौरोज: नया दिन) के हैं' ९ के नहीं। नौशेरखाँ के असली मानी नौशखाँ है। इसके पिता ने इसके पैदा होने पर शराब दरिया की तरह बहाई थी।

लोगों को सिंह के बल का प्रतिबिम्ब उसके नाम पर दिखाई पड़ता है, इसलिए राजपूत और सिख सभी 'सिंह' होते हैं। अंग्रेजों ने भी सिंह को अपनी महान् शक्ति का चिह्न बना रखा है। लन्दन में, ट्रफालगर चौक में चार सिंह नेलसन की मीनार के इर्द-गिर्द स्थापित हैं।

स्वतंत्र भारत ने भी सम्राट अशोक के चार सिंहों को अपना राष्ट्र चिह्न बना रखा है और उसके नीचे 'सत्यमेव जयते' का आदर्श वाक्य लिख दिया है।

सिंह का रहन-सहन व खाना-पीना

सिंह खुले मैदानों का जानवर है। भारत के उन बेहड़ों में जहाँ काले हिरन, नीलगाय, चिकारा, काकड़ व चौसिंघे रहते हैं, वहीं सिंह विचरता था। सच बात तो यह है कि यह कहना कठिन है कि भारत में सिंह बाहर से आया। सिंह के समस्त विस्तार की छान-बीन से यही जान पड़ता है कि सिंह या तो भारत में पला या बढ़ा या अफ्रीका के ऊँचे स्थानों में। पश्चिमी एशिया में इक्के-दुक्के सिंह थे तो अवश्य, पर इनके खाने-पीने व रहने और बढ़ने के लिए अच्छे मैदानी बेहड़ न थे। इसी कारण से सबसे पहले सिंह पश्चिमी एशिया ही से लुप्त हुआ। बलोचिस्तान में आखिरी सिंह लगभग १८६० में मारा गया। शेर की तरह सिंह आँख से ओझल नहीं रहता। इसी कारण इसको सभी लोग जानते हैं। सिंह अकेला भी नहीं रहता। सारा परिवार साथ-साथ घूमता है। अक्सर मादा और नर साथ-साथ शिकार करते हैं। एक आगे जा बैठता है और दूसरा शिकार को पीछे से खदेड़कर आगे लाता है।

धारीदार शेर बड़ी देख-भालकर, फूंक-फूंककर क़दम रखता हुआ, अपने दुबकाए हुए शिकार पर अँधेरे में लौटता है और यदि ज़रा भी खटका हुआ तो भूखा चला जाएगा, पर उस शिकार पर वापिस नहीं आएगा। सिंह ऐसा चौकन्ना जानवर नहीं है। वह अपने को जंगल का राजा समझता है, और दिन ढलते ही अपने शिकार पर अकेला ही नहीं, बल्कि सब बाल-बच्चों को लेकर आ धमकता है। आदमी और उसके तीर-कमान तथा तलवार को तुच्छ समझने वाला सिंह, बन्दूक व राइफिल की गोली के लिए तैयार न था। अपनी हेकड़ी में इसने अपने को मिटा लिया। धारीदार शेर का अभी बोलबाला है। सिंह की हस्ती मिट गई। इसमें सिंह का भी उत्तरदायित्व है, सारा कसूर शिकारियों ही का नहीं है।

कुछ लोगों का कहना है कि अफ्रीका का सिंह भारतीय सिंह से बड़ा तथा वहाँ के नर का अयाल लम्बा तथा रंग में गहरा होता है। थोड़ा-बहुत अन्तर तो जानवरों में स्थानीय कारणों से हो ही जाता है। जैसे, मध्य प्रदेश के

शेर, तराई के शेर सरीखे नहीं होते। जानवरों की तो कौन कहे, आदमी पर भी अपने रहने की जगह का असर स्पष्ट दिखाई पड़ता है। अफ्रीकी व हमारे देश के सिंह में कोई विशेष अन्तर नहीं है।

सिंह भी शेर की तरह, सब-कुछ ही खा लेता है। गाय, बैल, भैंस, हिरन इत्यादि जो हाथ लग जाए, उसे भक्ष्य है। गोश्त हो—चाहे कैसा ही हो—सड़ा हो या ताजा, चाहे किसी का हो, सिंह नहीं छोड़ता। एक बार में सिंह एक पूरी गाय खा लेता है।

सिंह बहुत आसानी से पेड़ों पर चढ़ जाता है। शेरों की तरह यह पेड़ों से नहीं बचता।

सिंह के कान सबसे तेज़ होते हैं, उसके बाद आँखें। और सबसे कम तेज नाक। यह शेर-सरीखा होशियार या चौकन्ना जानवर नहीं है। सिंह अपनी हेकड़ी को अपनी बहादुरी समझता है, और अपनी मूर्खता और दुःसाहस से मार खा जाता है।

सिंह का डील-डौल

सिंह, शेर से छोटा होता है। इसका रंग सपाट ऊँटिया होता है। उसकी खाल पर चित्तियाँ या धारियाँ नहीं होतीं। वह शेर की तरह डरावना नहीं होता। नर के गले (गर्दन) पर झबरा अयाल होता है। इसका खूंटी-नाप ७ फुट १० इंच से लेकर १० फुट तक होता है। इसका वज़न (भार) १८० किलो से २२५ किलो तक होता है। कन्धे की ऊँचाई ३ फुट ६ इंच तक होती है। भारत में सिंह मारना मना है, इसलिए इसकी लम्बाई, ऊँचाई और वज़न पर शेर की तरह विवाद या बहस नहीं है।

पालतू और आदमखोर सिंह

सिंह बड़ा निरीह जानवर है। यह बहुत आसानी से पल जाता है! सरकस वाले सिंह को शेर से अधिक पसन्द करते हैं। ज़्यादातर सरकसों में सिंह ही रखे जाते हैं। इनको सिखाना आसान है। श्रीमती जाय एडम्सन ने केनिया में एक सिंहिनी पाल रखी थी, जिसका नाम 'ऐलसा' था। 'ऐलसा' दिन भर घर रहती थी और रात में जंगलों में घूमने चली जाती थी। थोड़े दिनों के बाद

'ऐलसा' के बच्चे भी हुए। एक बार तो 'ऐलसा' एक जंगली नर को भी अपने घर ले आई।

सिंह खुले मैदानों में आदमी को हमेशा देखता है, इसलिए आदमी से बिलकुल नहीं डरता। शेर आदमी के डील-डौल से घबराता है। यदि सिंह आदमखोर हो गया, तो फिर आदमी की खैर नहीं रहती। चलते-फिरते, सोते-जागते आदमी ही पर हमला करता है। अफ्रीका के आदमखोर सिंहों की बड़ी भयानक कहानियाँ हैं। शेर जब तक जख्मी न हो, कभी हमला नहीं करता। कभी-कभी माँ, यदि बच्चों के साथ हुई तो आदमी पर ज़रूर दौड़ पड़ती है। आदमी को मारने के लिए नहीं, बल्कि उसको भगाने के लिए। सिंह में यह बात नहीं है। सिंह बहुधा आदमखोर हो जाता है। यदि जंगली जानवर न मिले तो मवेशी, और मवेशी कम हुए तो आदमी को खाने लगता है। बात असली यह है कि आदमी को सिंह से ज्यादा खतरा है, शेर से नहीं।

जूनागढ़ का सिंह

एक बार, गीर के जंगल में एक सिंह की तस्वीर लेने के लिए धीरे-धीरे मैं उसके काफी पास पहुँच गया। इस सिंह ने एक बैल मार रखा था और उसके खाने में मग्न था। जब वह उस बैल में मुंह गड़ाता, मैं एक क़दम आगे बढ़ा लेता। अचानक मेरा पैर एक लकड़ी के ऊपर पड़ गया। लकड़ी जो चटकी तो सिंह खाना छोड़कर एकदम खड़ा हो गया। मेरी ओर देखकर पूंछ हिलाने लगा। वहाँ से भागना तो मौत को सिर पर बुलाना था, मैं खामोश वहीं पत्थर की तरह जम गया।

हाथ में कैमरा था। कैमरे के पीछे मेरा चेहरा था। सिंह की समझ में न आया कि यह क्या बला है। थोड़ी देर बाद अपनी तसल्ली करने के लिए पूंछ दाएँ-बाएँ हिलाता मेरी ओर बढ़ा। जब मेरी मौत दो-चार कदम रह गई, तो सम्भव है कि उसने मुझ में कुछ हरकत देखी हो। सिंह ने पूंछ खड़ी कर ली।

पर इससे पहले कि वह मेरे ऊपर कूदे, सड़क पर जीप में बैठे एक जंगलात के अफ़सर ने बड़े जोर से आवाज़ दी और कहा, अरे साहब! आप क्या गज़ब कर रहे हैं! खुदा के वास्ते भागिए। सिंह आपके सिर पर आ पहुँचा।

जंगल के उस सन्नाटे में वह आवाजें नक्कारे की आवाज़ की तरह मालूम हुई। बजाय इसके कि वह मेरे ऊपर कूदे, उसने मुझे छोड़कर जीप की ओर दो जस्त ली। वहाँ बन्दूक के हवाई फायर करके लोगों ने उसे भगा दिया। मैं जहाँ खड़ा था वहीं बैठ गया, और बहुत देर बाद लड़खड़ाता हुआ जीप पर पहुँचा। यह घटना, स्वप्न में मुझे अब तक सताती है। भाग्यवश, इस सिंह की मेरे पास कई तस्वीरें हैं, जिनसे यह घटना बहुधा ताज़ी हो जाती है। सम्भव है कि यह कहानी लिखने के लिए ही मुझे इस सिंह ने छोड़ दिया हो!

सिंह की नसल

एक सिंह के साथ अक्सर दो या तीन सिंहिनी रहती हैं। बच्चे माँ के पेट में ९२ से ११३ दिन तक रहते हैं। एक ब्यांत में एक से छः तक बच्चे होते हैं, पर सामान्यतः ३ या ४। सिंह की उम्र २५ से ३० वर्ष तक होती है।

सिंह व शेर के बन

कहा जाता है कि सिंह और शेर एक ही जंगल में नहीं रह सकते। बात तो ठीक ही है। क्योंकि सिंह खुले मैदानों का जानवर है और शेर घने वनों का। लोगों का यह कहना कि जिन जंगलों में शेर रहते हैं, वहाँ अगर सिंह छोड़े जाएँ तो एक-दूसरे को खा जाएँगे, ठीक नहीं है। शेर तो बेचारा किसी से लड़ता ही नहीं। महाराजा अलवर ने चार बार सिंह व शेर की लड़ाई कराई थी। शेर पहले तो लड़ा ही नहीं, और जब जबरदस्ती लड़ाया गया, तो पूंछ दबाकर हार मान गया। समझ में नहीं आता कि किसी जंगल में सिंह व शेर किस बात के लिए लड़ेंगे। एक मादीन के लिए, दो शेर आपस में लड़ सकते हैं या दो सिंह एक-दूसरे को मार सकते हैं, पर सिंह और शेर का बिला वजह लड़ना, असम्भव है।

सिंह के लिए नए स्थान

सिंह को दुबारा भारत में स्थापित करने के लिए कई बार प्रयत्न किए गए। सदा यही बहस रही कि सिंह के लिए ऐसे जंगल ढूंढ़े जाएँ जहाँ शेर न हो। हमेशा खुले, हल्के बेहड़ों में सिंह बाहर से लाकर छोड़े गए और क्योंकि ये बेहड़ छोटे होते हैं, इनमें जंगली जानवर भी कम होते हैं, इनमें सिंह समा नहीं

पाता और वाहर निकल कर मवेशी और आदमी पर चोट करने लगता है।

महाराज माधवराव सिन्धिया ने ग्वालियर में अफ्रीका से सिंह मँगा कर वसाने का प्रयत्न किया। कहा जाता है कि १९०४ में लार्ड कर्ज़न ग्वालियर में धारीदार शेर का शिकार खेलने गए थे। उन्हीं के आदेश पर महाराजा साहव ने १९०५ में एक सिंह महकमा खोला, जिसका सालाना वजट डेढ़ लाख रुपया था। श्री डी० एम० जाल इस महकमे के कर्त्ताधर्त्ता थे। जाल साहव लार्ड कर्ज़न की चिट्ठी ले मिश्र व काहिरा में गए और वहाँ से अवीसीनिया (ईथोपिया) गए। उन्होंने वहाँ से दस वच्चे पकड़ कर वम्वई भेजे। रास्ते में दो वच्चे मर गए। महाराजा साहव ने वम्वई जाकर खुद इन वच्चों का स्वागत किया। एक वच्चा फिर भी वम्वई में मर गया। ७ वच्चे ग्वालियर पहुँचे। उनमें ३ नर थे (वाँके, वुन्दा और भजनू) और चार मादाएँ (विजली, गेंदी, रमैली व रामप्यारी)। ग्वालियर के तपोवन में यह पाले गए। दूसरे साल, दो मादाओं ने (३ व २) कुल पाँच वच्चे दिए। इसके वाद ४ जोड़े, ग्वालियर व शिवपुरी के वीच में मोहना के जंगल में पाग नदी के किनारे छोड़े गए। कुछ दिनों तक तो यह जंगली जानवरों पर रहे, फिर उन्होंने मवेशी मारना आरम्भ कर दिया। १९१० में उन्होंने एक आदमी को मारा और १९१२ तक ८ या १० आदमी मार दिए। इनको फिर पकड़ना पड़ा—केवल गेंदी हाथ न आई। थोड़े दिनों के वाद वह भी पकड़ी गई। इसके वाद १९१५ में इनको एक सुनसान जंगल में (श्योपुर) में छोड़ा गया। यहाँ यह कुछ दिनों तक रमते और वढ़ते रहे, और इनमें से कुछ आदमखोर हो गए और दूर-दूर जाकर (नीनच, पन्ना झाँसी, ललितपुर, मुरैना) मारे गए। सिंह को किसी और जंगल में स्थापित करना वड़ा कठिन है।

उत्तर प्रदेश में भी यही कठिनाइयाँ सामने आ रही है। यहाँ चकिया के जंगल (३७ वर्गमील) में चन्द्रप्रभा नदी के किनारे, जूनागढ़ से पकड़कर एक सिंह और दो मादाएँ दिसम्वर १९५७ में छोड़ी गई थीं। यहाँ पर नीलगाय, सूअर, चिकारा, चीतल व सांभर काफी तादाद में मिलते हैं। फरवरी, १९५८ में एक मादीन के साथ एक वच्चा भी देखा गया। कहा जाता है कि यहाँ पर अव ११ या १२ छोटे वड़े सिंह हैं। डर यह है कि कहीं चकिया से ये सिंह यदि वाहर निकल गए तो इनकी खैर नहीं है। क्योंकि कहीं ऐसा न हो कि ग्वालियर के सिंहों की तरह यह आदमी पर हमला करने लगें और मारे जाएँ।

३. गुल्दार या तेंदुआ

बिल्ली मौसी के घराने में, सबसे होशियार, मक्कार व ऐयार सदस्य गुल्दार होता है। हमारे देश में इसे कई नामों से लोग पुकारते हैं। संस्कृत में इसका नाम चित्र-व्याघ्र है। इसी से इसका नाम चीता पड़ा है। इसे बघटा, बगहा, बघेरा भी कहते हैं। मराठी में इसका नाम सिंघल, और बुन्देलखण्ड में इसको लोग तेंदुआ कहते हैं। इसके शरीर पर फूल व बूटे होते हैं। इसलिए लोग इसे गुल्दार व गुलबगहा भी कहते हैं।

गुल्दार का विस्तार

गुल्दार प्रायः सभी देशों में पाया जाता है। अफ्रीका में जहाँ धारीदार शेर नहीं होता, गुल्दार उस जगह मिलता है। यूरोप में भी प्राचीन काल में इसके होने का सबूत मिला है। अमरीका में भी, इसका भाई जैग्वार[1] सभी जगह मिलता है। गुल्दार समस्त एशियाई देशों में फैला हुआ है। उत्तर में साइबेरिया को छोड़कर यह समस्त चीन में पाया जाता है। पूर्वीय देशों में, बाली द्वीप के पास तक, पर बाली में नहीं, और दक्षिण में लंका तक अपना सिक्का जमाए हुए है। लंका में धारीदार शेर नहीं होता। इससे मालूम यह होता है कि जब गुल्दार भारत में आया तब लंका हमारे देश से जुड़ी हुई थी। शेर के पहुँचने तक, लंका और भारत के बीच में समुद्र आ गया और शेर लंका में न आ सका। गुल्दार जापान, मैडागास्कर, अंडमान व सहारा में नहीं पाया जाता। आस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैण्ड और बाली द्वीप के पूर्व में गुल्दार नहीं होता।

भारतवर्ष में गुल्दार चारों ओर फैला हुआ है, हिमालय में, ६ हज़ार फुट तक और कभी-कभी तो ८ हज़ार फुट तक गुल्दार मिलता है। गुल्दार कहीं भी हो, सबसे ऊँची जगह जा कर बैठता है।

---

१. दक्षिणी अमरीकन इंडियन इसको जैग्वार इसलिए पुकारते हैं, क्योंकि यह एक ही कूद या छलांग में अपना शिकार पकड़ लेता है।

गुल्दार के वेल-वूटे

गुल्दार का शरीर सुनहरा होता है। नीचे की ओर पेट पर सफेद, और उसके ऊपर चारों ओर काले फूलों की तरह छाप होती है। वाल मुलायम, और वचपन में व जाड़ों और ठंडे देशों में वड़े व घने रहते हैं। गर्मियों में वाल हल्के पड़ जाते हैं। कहीं-कहीं गुल्दार का रंग हल्का सुनहरा, खाकी व ऊँटिया होता है। वूटे शरीर पर एक से नहीं होते हैं।

हाथ, पैर, गर्दन, सिर, पूंछ और पेट के वूटे गहरे काले और ठोस होते हैं। पीठ के वूटे, वीच में खुले रहते हैं, और तीन या चार काले चांदों के वीच में गहरा सुनहरा रंग रहता है। असम और केरल में, जहाँ साल में सौ इंच से ऊपर वर्षा होती है, गुल्दार का रंग विलकुल काला हो जाता है। यदि ध्यान से देखा जाए तो काले रंग के अन्दर, वूटे साफ-साफ नज़र आते हैं। पेट पर वे वूटे खूव ही दिखाई पड़ते हैं। काले गुल्दार, और मामूली रंग के गुल्दार वहुधा एक ही माँ के वच्चे होते हैं। यह कोई गुल्दार की अलग नसल नहीं है।

गुल्दार का रंग और उसके वूटे उसे और जानवरों की आँखों से ओझल रखते हैं। पीलीभीत में एक वार दिन के ग्यारह वजे मुझे एक गुल्दार मिला, जो दूर से सवको सूअर नज़र आता था। महोर्फ के पास, शाम को, मैंने एक शेर मारा जो वाद को गुल्दार निकला। गुल्दार के रंग और उसके वूटों से आदमी को भी धोखा हो सकता है, फिर जानवरों की तो कहे कौन! जंगल के अन्दर धूप-छांह में जव इसके शरीर पर पत्तों की छाया पड़ती है, तब पता नहीं चलता कि वहाँ गुल्दार है भी या नहीं।

विल्ली मौसी के कुनवे में, सवसे सुहावना, सुन्दर और भोला-भाला गुल्दार ही है। इसे देखकर इसके ऊपर हाथ फेरने का मन होता है।

डीलडौल

गुल्दार वहुत-कुछ घरेलू विल्ली से मिलता-जुलता है। इकहरा वदन, वे-आहट चाल, चौकन्ने कान, उस्तरे के समान तेज ज़वान और फुरती व तेज़ी में गुल्दार अपने और भाई-वंधुओं में सवसे आगे है।

गुल्दार के कन्धे की ऊँचाई कोई ढाई फुट होती है। इसका 'खूंटी-नाप' ८ फुट से अधिक नहीं होता, जिसमें पूंछ की लम्वाई ढाई से तीन फुट तक रहती

है। मेरे मारे हुए गुल्दारों में, सबसे बड़े गुल्दार का खूंटी-नाप ७ फुट १० इंच था (पीलीभीत)। मादीन लम्बाई में नर से फुट-भर कम होती है। नर का वजन ६० से ८५ किलो० तक रहता है। जंगल के रहनेवाले गुल्दार डीलडौल में, गाँवों के आसपास के घूमने वालों से बड़े होते हैं। मादा छोटी और वज़न में हल्की होती है (३०-४५ किलो०)।

गुल्दार के पंजे

अपने और भाई-बंधुओं की तरह गुल्दार के पंजे गद्दीदार होते हैं। सामने हाथों में ५, और पीछे पैरों में ४ पैने नाखून होते हैं, जिनको चलते-फिरते समय गुल्दार पीछे खींच लेता है। गुल्दार अपनी उँगलियों के बल फूंक-फूंक कर कदम रखता है। अगले पैर पर पिछला पैर ऐसा पड़ता है कि पैर के निशान दो पैर के जानवर की तरह मालूम पड़ते हैं।

गुल्दार के १८ नाखून, १८ चाकुओं का काम देते हैं। गुल्दार के पंजों में फँसा कोई जानवर बच नहीं सकता। अपने नाखूनों को गुल्दार पेड़ों से घिस कर तेज़ रखता है और चलते-फिरते पैर की गद्दी में खींचकर उनको बचाए रखता है।

रहन-सहन

गुल्दार की हरी व कंजी आँख का छेद गोल रहता है, बिल्लियों की तरह सीधा खड़ा नहीं होता। टार्च की रोशनी में इसकी आँखें जलते कोयले की तरह दहकती हैं। गुल्दार तेज़ रोशनी से घबराता है। इसीलिए दिन ढले बाहर निकलता है। किन्तु शेर से, जो बिलकुल दिन छिपे बाहर निकलता है, दो-एक घंटे पहले ही गुल्दार घूमने-फिरने लगता है।

गुल्दार, सिंह व शेर के समान दहाड़ता नहीं, बल्कि खाँसता है। जब यह जंगल में बोलता है, तो ऐसा जान पड़ता है कि कहीं आरा चल रहा है। यही आवाज अक्सर मादीन नर को बुलाने के लिए करती है। गुल्दार अपना गुस्सा छींक कर प्रकट करता है और अपने बच्चों को डाटते समय सांप की तरह फुंकारता है। मगर आम तौर पर गुल्दार, सिंह व शेर से बहुत कम बोलता है।

गुल्दार बड़ी आसानी से बिल्ली की तरह, पेड़ों और मकानों की छत पर चढ़ जाता है। यह बहुधा अपना मारा हुआ शिकार पेड़ों पर डालियों के बीच दुबका देता है। गुल्दार पानी से घबराता है। पानी के पास नहीं फटकता। अपने ऊपर बूंद नहीं पड़ने देता। शेर गर्मियों में पानी में पड़े मिलते हैं, मगर गुल्दार नहीं।

शेर की तरह गुल्दार के कान सबसे ज़्यादा तेज़ होते हैं। उसके बाद आँख और सबसे कम नाक। एक बार मैं मचान पर बैठा था। गुल्दार की मारी गाय नीचे पड़ी थी। थोड़ी देर बाद जब गुल्दार लाश की ओर आया तो मैंने बन्दूक सम्भाली। ऐसा करने में, एक छोटी-सी टहनी बन्दूक से लग गई। बस टहनी के बन्दूक से छूने की हल्की आवाज़ गुल्दार के लिए नक्कारे की आवाज़ थी। वह एकदम अपनी जगह खड़ा हो गया और ऊपर देखने लगा। कोई दस मिनट खड़ा रहा। मैं साँस रोके बैठा रहा। पर उसको तसल्ली न हुई।

गुल्दार बेहड़, नदी-नालों, खोह, पहाड़ों आदि में जहाँ-तहाँ मनमाने रमते हैं। कोई जगह हो, वहाँ सबसे ऊँचे टीले पर जा बैठते हैं। पेड़ों पर अक्सर चढ़कर नीचे चरते हुए जानवरों पर कूद पड़ते हैं। सहारनपुर के जंगलों में, एकबार मैंने एक गुल्दार को एक पेड़ के ठूंठ पर बैठा देखा। नीचे चीतल चर रहे थे। वह चीतलों में ऐसा खोया हुआ बैठा था कि उसने हम लोगों की आहट न ली और अपनी जान दे दी।

गुल्दार अपने शरीर को ऐसा सिकोड़ लेता है कि छोटी-से-छोटी जगह में दुबक जाता है। एक बार, (बेरीबाड़ा, सहारनपुर में) एक गुल्दार के सिर पर मैं खड़ा बेखबर बातें करता रहा और थोड़ी देर बाद जब मेरी सवारी का हाथी मेरे पास आया, तो उसे देख कर गुल्दार ने एकाएक छलाँग मारी और निकल गया। दिल्ली के चिड़ियाघर में भोला (काला गुल्दार) अपने पिंजरे से बाहर निकल गया। पिंजरे की लोहे की छड़ों के बीच में मुश्किल से ६ इंच का फासला होगा।

खाना-पीना

गुल्दार सर्वभक्षी है। वह क्या कुछ नहीं खाता? बन्दर, बकरी, हिरन, चीतल, गाय, बैल, घोड़ा, गीदड़, गधा, बस जो जानवर हाथ लग जाए, उसे

स्वीकार है। किन्तु कुत्तों को यह बड़े चाव से खाता है। जंगलों के अधिकारियों के कुत्तों को गुल्दार बहुधा डाक बंगलों से उठा ले जाते हैं। कभी-कभी तो सोते हुए साहबों की चारपाई के नीचे से वे उनके कुत्तों को उठा ले गए हैं।

धोलखंड (सहारनपुर) में, एक गुल्दार घोड़ी के एक बच्चे को एक झोपड़ी में से उठा ले गया। उसकी माँ के हिनहिनाने से पता लगा कि क्या हुआ। हरिद्वार के पास रानीपुर में मैंने एक गुल्दार मारा था, जो आए दिन सन्ध्या को एक उँटनी के बच्चे की ताक में आ बैठता था। गुल्दार को सड़े, कीड़े पड़े गोश्त खाने में कोई हिचक नहीं होती। बहुधा शेर का मारा और छिपाया हुआ शिकार, गुल्दार चोरी से खा जाता है। किन्तु यदि अपनी मारी लाश पर उसे आदमी का तनिक भी सन्देह हो जाए, तो उसे छोड़ कर वह भूखा चला जाएगा और कभी वापस न आएगा।

गुल्दार, शेर की तरह सफाई से नहीं खाता। शेर, जानवरों को पुट्ठे से खाना शुरू करता है; और पेट से ओज बड़ी सफाई से निकाल कर फेंक देता है। गुल्दार पेट फाड़ कर खाना शुरू करता है। इसमें बहुधा ओज फट जाती है और जानवर का गोबर चारों ओर फैल जाता है। केवल खाने के तरीके से पता लग जाता है कि लाश शेर ने खाई है या गुल्दार ने।

शेर की तरह, गुल्दार की जीभ एक तरफ से उस्तरे की तरह तेज, और दूसरी तरफ मखमल की तरह मुलायम होती है।

गुल्दार की झपट

गुल्दार अपने शिकार पर, जैसा लोग समझते हैं, कभी नहीं कूदता। वह बिजली की तरह झपट कर जानवर को आ दबोचता है। एक बार मैं खुली गाड़ी में, एक गुल्दार की राह देख रहा था। सामने कुत्ता बांध रखा था। कुत्ते के भौंकने पर गुल्दार ऐसी तेज़ी से आया कि मेरी गोली खाली गई और वह भाग गया।

गाँवों के इर्द-गिर्द बहुधा गुल्दार रात में चक्कर लगाते रहते हैं और बछिया, बकरी, मुर्गा, कुत्ता जो कुछ हाथ आ गया उसे उठा ले जाते हैं। कभी-कभी

जिससे कि वह गिद्धों से बची रहे। जब दिन ढले मैं मचान पर जाकर बैठा तो क्या देखता हूँ कि गुल्दार बड़े इतमीनान से पत्तों के नीचे से बछिया की लाश निकाल ले गया था। हम लोग एक दूसरे का मुँह देखते ही रह गए।

गुल्दार जो कुछ न कर बैठे, वही थोड़ा है। वैसे तो अपने को आँख से ओझल रखता है, पर कभी-कभी बीच जंगल की सड़कों के चौराहे पर आकर बैठता है। मचान के नीचे बाँधी बकरी पर तो न आएगा, पर आपकी चारपाई के नीचे से कुत्ता उठा ले जाएगा। केरल के पिछले चुनाव में (फरवरी सन् १९६७) एक गुल्दार वेमबयम (ट्रीवेन्द्रम से १३ मील पर) अपनी वोट देने भी पहुँच गया।)

बहराइच के जंगल में एक विश्रामगृह (रेस्टहाउस) में तो एक अजीब घटना हुई। वर्षा के दिनों में जंगलों में काम बन्द रहता है और बंगलों में कोई रहने नहीं जाता। जाड़ों के आरम्भ में एक बंगले में श्री शाहनवाज खाँ जाकर ठहरे। उन्होंने यह सुना कि बरसात भर एक गुल्दार इसी कोठी में रहता रहा। अगले दिन सुबह जब वहाँ के रेंजर साहब उनसे मिलने आए तो शाहनवाज़ ने उनसे गुल्दार के बारे में पूछा। 'हाँ हजूर, बात तो यह सही है' रेंजर साहब ने कहा। किन्तु शाहनवाज को विश्वास नहीं हुआ। उस पर रेंजर साहब उनको पीछे के बरंडे की उस कोठरी में ले गए जहाँ गुल्दार रहा करता था। किवाड़ जो खोले तो गुल्दार ने निकल कर शाहनवाज पर हमला कर दिया, और रेंजर साहब ने बचाने की जो कोशिश की, तो उनका भी साफा उतार लिया। थोड़ी देर बाद, ज़्यादा भीड़-भड़क्का देखकर, गुल्दार अपनी कोठरी छोड़कर चला गया। कोठरी के निरीक्षण करने से पता चला कि वह एक ज़ख्मी गुल्दार था जो जंगल की मक्खियों से बचने के लिए इस बंगले में सारी बरसात ही रहा था। ज़ख्म कांटों के थे। हँसी की बात यह थी कि गुल्दार और शाहनवाज दोनों ही रात भर एक ही बंगले में ठहरे रहे। इसका पता सुबह चला।

पालतू गुल्दार

शेर से कहीं ज्यादा गुल्दार मनहूस होता है। यह बहुत आसानी से पल जाता है। मेरे पास दो बच्चे बहुत दिनों तक रहे। सबसे अधिक कठिनाई उन्हें दूध पिलाने में होती थी। दूध की बोतल की रबड़ की निपिल अक्सर उनके

मुँह ही में रह जाती थी। गुल्दार के बच्चों को खाँसी-जुकाम से बचाना कठिन होता है। इसी बीमारी से ये दोनों बच्चे मर गए।

झाँसी के पास तालवहेट के थाने पर एक पालतू गुल्दार और कुत्ता दोनों ही साथ-साथ खेलते थे। गुल्दार ने जब थाने की मुर्गियों को मारना शुरू किया, तो काफी मार खाने पर उनको मारना बन्द कर दिया। कभी-कभी गुल्दार और कुत्ता दोनों बाहर शिकार को निकल जाते थे। कुत्ता अक्सर भौंक कर बन्दरों को पेड़ों पर चढ़ा देता था और गुल्दार उन्हें पेड़ पर चढ़ कर जा दबोचता था। कभी-कभी गाँव वालों की बकरी, भेड़, व गाय के बच्चे भी चट कर जाते थे। इन दोनों से सब लोग परेशान थे। एक बार तो यह गुल्दार अपना जोड़ीदार जंगल से थाने में ले आया। जंगली गुल्दार को देखकर सब लोगों के होश उड़ गए। हार कर इस पालतू गुल्दार को छुट्टी देनी पड़ी। गुल्दार को पालना पूरी मुसीबत मोल लेना है। आदमी के साथ यह साल-भर से ज्यादा नहीं रह सकता।

गुल्दार के रिश्तेदार

हमारे देश में गुल्दार के दो और भाई हैं। काश्मीर, पामीर, ल्हासा, तिब्बत, और दस हज़ार फुट की ऊँचाई पर समस्त पश्चिमी हिमालय में, बर्फी गुल्दार (Snow Leopard) पाया जाता है। देशी गुल्दार से यह छोटा होता है। उसकी लम्बाई ७ से ८ फुट तक, और उसका वज़न २५ से ४० किलो तक होता है। उसकी पूंछ काफी लम्बी होती है (३ फुट से ३ फुट ६ इंच तक)। उसके शरीर का रंग मटमैला, सफेद और उस पर हल्के काले धब्बे रहते हैं। इसी कारण यह बर्फ से ढँके, खुले व नंगे पहाड़ों में आँख से ओझल रहता है। और सब बातों में हमारे जंगली गुल्दार से मिलता-जुलता है। इसे लोग अक्सर लोहे के काँटे के फंदों में फँसा लेते हैं। इसी कारण चिड़ियाघरों के बर्फी-गुल्दारों के हाथ-पैर साबित नहीं होते। बर्फी-गुल्दार की खाल के लिए लोग काफी दाम देते हैं, क्योंकि इसके बाल बड़े और मुलायम होते हैं।

गुल्दार का दूसरा भाई पूर्वी हिमालय में नैपाल, सिक्कम, दक्षिणी चीन और असम में पाया जाता है। यह घोर वनों में विचरता है, और बहुधा पेड़ों ही पर रहता है। इसका रंग गेहुआं और खाकी होता है। सिर, हाथ, पैर तथा

पूँछ पर वड़े-वड़े काले ठोस वूटे रहते हैं। पर वदन के ऊपर वहुत चौकोर व चौड़े और गहरे निशान होते हैं जिनसे धारियों का धोखा होता है। इसलिए इसका नाम वादली-गुल्दार (Clouded Leopard) पड़ा है। छुटपन में वूटे छोटे रहते हैं।

इसके कंधे की ऊँचाई ढाई फुट रहती है। शरीर का खूंटी-नाप ४ फुट ८ इंच से ७ फुट ५ इंच तक होता है। इसमें पूँछ की लम्वाई लगभग आधी से थोड़ी ही कम होती है। वज़न १७ से २३ किलो तक वैठता है।

यह और गुल्दारों से टाँगों में भारी होता है। इसके पंजे चौड़े-चपटे होते हैं। इसकी दाढ़ के दाँत काफी लम्वे और मज़वूत होते हैं।

वोरनिओ के लोग इन दाँतों के लिए मनमाने दाम देते हैं, और कानों में पहनते हैं।

यह वादली गुल्दार वड़ा मनहूस जानवर है। आसानी से पल जाता है और दिन-भर छोटी-मोटी चीजों से खेलता रहता है।

यह वहुधा पेड़ों से छलांग मार कर हिरन, सूअर, वन्दर, वकरी इत्यादि का शिकार करता है। यदि पेड़ पास न हों, तो ज़मीन से शिकार करता है।

सामान्यतः एक बार में इसके दो ही वच्चे होते हैं, जिन्हें माँ खोखले पेड़ों और गुफाओं में दुवका कर पालती है।

गुल्दार का एक सगा भाई जैग्वार हमारे देश में नहीं, वल्कि अमरीका में होता है। यह हमारे गुल्दार से वड़ा और भारी होता है। रंग में चटकीला, और इसके वूटों में २ या ३ काली वूंदें रहती हैं। इसके सीधे कान पीछे से काले होते हैं। गुल्दार की तरह विलकुल काले जैग्वार भी होते हैं। जैग्वार, गुल्दार की तरह पानी से नहीं घवराता और अच्छी तरह तैर सकता है। और सव वातों में गुल्दार और जैग्वार एक-दूसरे से मिलते-जुलते हैं।

४. चीता

चीता (Hunting Leopard) वैसे है तो बिल्ली ही के खानदान का, मगर अपनी चाल-ढाल, रहन-सहन व शरीर की बनावट में अपने किसी और भाई-बहिन से नहीं मिलता। संस्कृत में इसे चित्रक कहते हैं।

चीते दो प्रकार के होते हैं। हमारे देश का चीता वही है, जो मिश्र, लिबिया, मोरक्को, नाइजीरिया, सूडान और सुमालिया के खुले मैदानी जंगलों में पाया जाता है।

चीता, गुल्दार से ऊँचा होता है और इसकी लम्बी टाँगें बिल्ली की तरह नहीं, बल्कि कुछ-कुछ कुत्ते से मिलती हैं। इसके कन्धे की ऊँचाई ३ फुट ३ इंच[1] और वज़न ५० से ६५ किलो तक होता है। खूंटी-नाप ६ फुट ६ इंच से ७ फुट ४ इंच तक होता है, जिसमें पूंछ की लम्बाई २ फुट से २ फुट ६ इंच तक रहती है।

चीते का रंग सुनहरी, गन्दुमी, खाकी व कुछ-कुछ गुल्दार के रंग से मिलता है। नीचे और अन्दर के हिस्से सफेद रहते हैं। नाक के दोनों ओर एक गहरी काली आंसू जैसी धारी आँख से मुंह तक रहती है। चीते के बूटे दूर से तो गुल्दार सरीखे मालूम पड़ते हैं, पर पास से ध्यान से देखने पर इनमें बड़ा अन्तर होता है। इनमें गुल्दार जैसे चाँद कहीं नहीं होते। सारे शरीर पर सब बूटे ठोस, काले और घने होते हैं। बाल कड़े और गर्दन झबरी होती है। आँखों की पुतली गोल, कान छोटे और छोटा-सा सिर गोलाई लिए हुए होता है। इसके नाखून कम ढके रहते हैं, और बिल्लियों के नाखूनों की तरह अन्दर पूरी तौर से सिकुड़ नहीं सकते। चीते के पैर और पंजे बहुत-कुछ कुत्तों से मिलते-जुलते हैं।

चीते की लम्बी टाँगें बेमतलब नहीं हैं। इसके बराबर तेज़ दौड़ने वाला कोई और जानवर नहीं है। यह गुल्दार और शेर की तरह रात में दुबक व झपटकर शिकार नहीं करता। यह हिरन और चीतल इत्यादि के पीछे ३-४ मील तक दौड़ उनको थका कर जा दबोचता है। यह दिन में खुले में शिकार खेलता

१. गुल्दार के कन्धे की ऊँचाई ढाई फुट के लगभग होती है।

शिकार दोनों ही लुढ़कते हुए पहाड़ी से फिसल पड़े। हकीमउद्दीन को एक पत्थर ने रोक लिया। गुल्दार थोड़ी दूर और नीचे जाकर गिरा। अब और शिकारी ने गोली जो मारी तो गुल्दार उसके पीछे लपका। इस बीच में हकीमउद्दीन ने अपनी राइफल ठीक कर ली थी। और, एक गोली लगा कर अपनी जान बचाई।

गढ़वाल के मुकन्दीलाल को उनके बारहवें गुल्दार ने मौत के घाट तक पहुँचा दिया था। टिहरी शहर की एक गली में, गुल्दार ने घुसकर एक गधे को मार दिया। गधे की लाश पर लालटेन रखकर मुकन्दीलाल, गुल्दार के लिए बैठे। सूर्यास्त से पहले ही गुल्दार गधे की लाश पर आ धमका। मुकन्दीलाल ने गोली तो चलाई पर वह ओछी पड़ी। मुकन्दीलाल अगले दिन सुबह घायल गुल्दार का पता लगाते महाराजा के पुराने महल के बाग में पहुँचे। वहाँ एक झाड़ी में गुल्दार दुबका हुआ था। झाड़ी पर पत्थरों की बौछार से गुल्दार जो बाहर निकला, तो मुकन्दीलाल ने फिर गोली चलाई। वह भी न लगी, और गुल्दार फिर झाड़ी में लौट गया। चारों ओर से छतों पर चढ़े हुए लोग चिल्ला रहे थे, और उस झाड़ी पर बराबर पत्थर फेंक रहे थे। अब दुबारा जो गुल्दार बाहर आया तो मुकन्दीलाल की बन्दूक की आखिरी गोली भी खाली गई। गुल्दार ने मुकन्दीलाल को पकड़ लिया। पहले तो दायें कन्धे पर हमला किया, और फिर टाँगों पर। मुकन्दीलाल के हाथ में खाली बन्दूक थी। उसको लाठी की तरह चलाकर अपने को बचाते रहे। आखिर, बन्दूक का कुन्दा बड़े जोर से गुल्दार के सिर पर मारा। बन्दूक का कुन्दा, व गुल्दार का सिर दोनों ही फट गए। गुल्दार गिर गया। यह गुल्दार और आदमी की कुश्ती सारी जनता ने छतों पर से देखी। मुकन्दीलाल महीनों अस्पताल में रहे।

रानीपुर (हरिद्वार) के पास, शिवालिक की पहाड़ियों में एक घायल गुल्दार का पीछा करने का ज़िक्र करते हुए अब भी मेरे रोंगटे ही नहीं बल्कि बाल तक खड़े हो जाते हैं। बस इतना ही कहना काफी है कि जब गुल्दार मेरे ऊपर एक पत्थर के पीछे से यकायक कूदा तो मैं गिर गया। मेरी बन्दूक चल गई—न जाने कैसे! मुझे कोई होश नहीं। दुबारा गोली खाकर और घबराकर, गुल्दार मुझे छोड़ नीचे पत्थरों में जा गिरा।

हाँ, गुल्दार के हमले की एक बात याद रखने योग्य है। घायल गुल्दार की

चोट ऐसी कारगर नहीं होती, जैसी शेर की। मैंने गुल्दार के मारे हुए तो बहुत आदमी बचते देखे, पर आज तक शेर के वार से किसी को बचते नहीं देखा।

गुल्दार की नसल

गुल्दार के बच्चे देने का कोई खास मौसम नहीं होता। बहुधा तीन-चार बच्चे एक ब्यांत में होते हैं। कभी-कभी पाँच बच्चे भी होते देखे गए हैं। चिड़ियाघरों में देखा गया है कि मां के बच्चे लगभग ३ महीनों में होते हैं। बच्चों की आँखें कोई १५-२० दिन तक बन्द रहती हैं। कभी-कभी नर भी बच्चों के पालने में माँ की मदद करता है। माँ, बच्चों को एकान्त और सूनी जगहों में ले जा कर पालती है, और किसी को पास नहीं फटकने देती। थोड़े दिन एक जगह रखने के बाद अपने बच्चों को दूसरी जगह ले जाती है। माँ अपने बच्चों को गर्दन के ऊपर की खाल को दाँतों से पकड़ कर एक जगह से दूसरी जगह ले जाती है।

गुल्दार की समझ-बूझ

गुल्दार के बराबर शायद ही कोई जानवर होशियार हो। शिकारी का खटका दूर ही से ले यह चुपके से खिसक जाता है। गुल्दार शेरों से कहीं ज़्यादा हमारे जंगलों में होते हैं, मगर बहुत कम हाथ आते हैं। हर दो तीन शेरों के पीछे एक गुल्दार मारा जाता है। याद रखने की बात है कि गुल्दारों की संख्या शेरों से कहीं ज़्यादा है और फिर भी अपने चौकन्नेपन के कारण शेरों के मुक़ाबले, गुल्दार बहुत कम मारे जाते हैं।

गुल्दारों की होशियारी की मुझे कई कहानियाँ याद हैं। एक बार लालकुएँ के पास बैल पड़ाव पर एक गुल्दार ने दिन दहाड़े एक गाय की बछिया पकड़ ली। चरवाहों ने आकर जब मुझे सब हाल सुनाया तो मैंने अपना शिकारी भेजा, जहाँ मरी बछिया पड़ी थी, उसके पास एक पेड़ पर एक मचान बँधवा दिया। बछिया की लाश को घास व पत्तों से, शिकारी ने खूब ढक दिया था

१. उत्तर प्रदेश में सन् १९४८ से १९५३ तक ४४८ शेर मारे गए और गुल्दार केवल १४८। मध्य प्रदेश में इन्हीं ५ सालों में ४०८ शेर और केवल २९४ गुल्दार शिकार में मारे गए।

जिससे कि वह गिद्धों से बची रहे। जब दिन ढले मैं मचान पर जाकर बैठा तो क्या देखता हूँ कि गुल्दार बड़े इतमीनान से पत्तों के नीचे से बछिया की लाश निकाल ले गया था। हम लोग एक दूसरे का मुँह देखते ही रह गए।

गुल्दार जो कुछ न कर बैठे, वही थोड़ा है। वैसे तो अपने को आँख से ओझल रखता है, पर कभी-कभी बीच जंगल की सड़कों के चौराहे पर आकर बैठता है। मचान के नीचे बाँधी बकरी पर तो न आएगा, पर आपकी चारपाई के नीचे से कुत्ता उठा ले जाएगा। केरल के पिछले चुनाव में (फरवरी सन् १९६७)एक गुल्दार वेमबयम (ट्रीवेन्द्रम से १३ मील पर) अपनी वोट देने भी पहुँच गया।)

बहराइच के जंगल में एक विश्रामगृह (रेस्टहाउस) में तो एक अजीब घटना हुई। वर्षा के दिनों में जंगलों में काम बन्द रहता है और बंगलों में कोई रहने नहीं जाता। जाड़ों के आरम्भ में एक बंगले में श्री शाहनवाज खाँ जाकर ठहरे। उन्होंने यह सुना कि बरसात भर एक गुल्दार इसी कोठी में रहता रहा। अगले दिन सुबह जब वहाँ के रेंजर साहब उनसे मिलने आए तो शाहनवाज़ ने उनसे गुल्दार के बारे में पूछा। 'हाँ हजूर, बात तो यह सही है' रेंजर साहब ने कहा। किन्तु शाहनवाज को विश्वास नहीं हुआ। उस पर रेंजर साहब उनको पीछे के बरंडे की उस कोठरी में ले गए जहाँ गुल्दार रहा करता था। किवाड़ जो खोले तो गुल्दार ने निकल कर शाहनवाज पर हमला कर दिया, और रेंजर साहब ने बचाने की जो कोशिश की, तो उनका भी साफा उतार लिया। थोड़ी देर बाद, ज़्यादा भीड़-भड़क्का देखकर, गुल्दार अपनी कोठरी छोड़कर चला गया। कोठरी के निरीक्षण करने से पता चला कि वह एक ज़ख्मी गुल्दार था जो जंगल की मक्खियों से बचने के लिए इस बंगले में सारी बरसात ही रहा था। ज़ख्म कांटों के थे। हँसी की बात यह थी कि गुल्दार और शाहनवाज दोनों ही रात भर एक ही बंगले में ठहरे रहे। इसका पता सुबह चला।

पालतू गुल्दार

शेर से कहीं ज्यादा गुल्दार मनहूस होता है। यह बहुत आसानी से पल जाता है। मेरे पास दो बच्चे बहुत दिनों तक रहे। सबसे अधिक कठिनाई उन्हें दूध पिलाने में होती थी। दूध की बोतल की रबड़ की निपिल अक्सर उनके

मुँह ही में रह जाती थी। गुलदार के बच्चों को खाँसी-जुकाम से बचाना कठिन होता है। इसी बीमारी से ये दोनों बच्चे मर गए।

झाँसी के पास तालबहेट के थाने पर एक पालतू गुलदार और कुत्ता दोनों ही साथ-साथ खेलते थे। गुलदार ने जब थाने की मुर्गियों को मारना शुरू किया, तो काफी मार खाने पर उनको मारना बन्द कर दिया। कभी-कभी गुलदार और कुत्ता दोनों बाहर शिकार को निकल जाते थे। कुत्ता अक्सर भौंक कर बन्दरों को पेड़ों पर चढ़ा देता था और गुलदार उन्हें पेड़ पर चढ़ कर जा दबोचता था। कभी-कभी गाँव वालों की बकरी, भेड़, व गाय के बच्चे भी चट कर जाते थे। इन दोनों से सब लोग परेशान थे। एक बार तो यह गुलदार अपना जोड़ीदार जंगल से थाने में ले आया। जंगली गुलदार को देखकर सब लोगों के होश उड़ गए। हार कर इस पालतू गुलदार को छुट्टी देनी पड़ी। गुलदार को पालना पूरी मुसीबत मोल लेना है। आदमी के साथ यह साल-भर से ज्यादा नहीं रह सकता।

गुलदार के रिश्तेदार

हमारे देश में गुलदार के दो और भाई हैं। काश्मीर, पामीर, ल्हासा, तिब्बत, और दस हज़ार फुट की ऊँचाई पर समस्त पश्चिमी हिमालय में, बर्फी गुलदार (Snow Leopard) पाया जाता है। देशी गुलदार से यह छोटा होता है। उसकी लम्बाई ७ से ८ फुट तक, और उसका वज़न २५ से ४० किलो तक होता है। उसकी पूंछ काफी लम्बी होती है (३ फुट से ३ फुट ६ इंच तक)। उसके शरीर का रंग मटमैला, सफेद और उस पर हल्के काले धब्बे रहते हैं। इसी कारण यह बर्फ से ढँके, खुले व नंगे पहाड़ों में आँख से ओझल रहता है। और सब बातों में हमारे जंगली गुलदार से मिलता-जुलता है। इसे लोग अक्सर लोहे के काँटे के फंदों में फँसा लेते हैं। इसी कारण चिड़ियाघरों के बर्फी-गुलदारों के हाथ-पैर साबित नहीं होते। बर्फी-गुलदार की खाल के लिए लोग काफी दाम देते हैं, क्योंकि इसके बाल बड़े और मुलायम होते हैं।

गुलदार का दूसरा भाई पूर्वी हिमालय में नैपाल, सिक्कम, दक्षिणी चीन और असम में पाया जाता है। यह घोर वनों में विचरता है, और बहुधा पेड़ों ही पर रहता है। इसका रंग गेहुआं और खाकी होता है। सिर, हाथ, पैर तथा

पूँछ पर वड़े-वड़े काले ठोस वूटे रहते हैं। पर वदन के ऊपर वहुत चौकोर व चौड़े और गहरे निशान होते हैं जिनसे धारियों का धोखा होता है। इसलिए इसका नाम वादली-गुल्दार (Clouded Leopard) पड़ा है। छुटपन में वूटे छोटे रहते हैं।

इसके कंधे की ऊँचाई ढाई फुट रहती है। शरीर का खूंटी-नाप ४ फुट ८ इंच से ७ फुट ५ इंच तक होता है। इसमें पूंछ की लम्वाई लगभग आधी से थोड़ी ही कम होती है। वज़न १७ से २३ किलो तक वैठता है।

यह और गुल्दारों से टाँगों में भारी होता है। इसके पंजे चौड़े-चपटे होते हैं। इसकी दाढ़ के दाँत काफी लम्वे और मज़वूत होते हैं।

वोरनिओ के लोग इन दाँतों के लिए मनमाने दाम देते हैं, और कानों में पहनते हैं।

यह वादली गुल्दार वड़ा मनहूस जानवर है। आसानी से पल जाता है और दिन-भर छोटी-मोटी चीजों से खेलता रहता है।

यह वहुधा पेड़ों से छलांग मार कर हिरन, सूअर, वन्दर, वकरी इत्यादि का शिकार करता है। यदि पेड़ पास न हों, तो ज़मीन से शिकार करता है।

सामान्यतः एक वार में इसके दो ही वच्चे होते हैं, जिन्हें माँ खोखले पेड़ों और गुफाओं में दुवका कर पालती है।

गुल्दार का एक सगा भाई जैग्वार हमारे देश में नहीं, वल्कि अमरीका में होता है। यह हमारे गुल्दार से वड़ा और भारी होता है। रंग में चटकीला, और इसके वूटों में २ या ३ काली वूंदें रहती हैं। इसके सीधे कान पीछे से काले होते हैं। गुल्दार की तरह विलकुल काले जैग्वार भी होते हैं। जैग्वार, गुल्दार की तरह पानी से नहीं घवराता और अच्छी तरह तैर सकता है। और सव वातों में गुल्दार और जैग्वार एक-दूसरे से मिलते-जुलते हैं।

४. चीता

चीता (Hunting Leopard) वैसे है तो बिल्ली ही के खानदान का, मगर अपनी चाल-ढाल, रहन-सहन व शरीर की बनावट में अपने किसी और भाई-बहिन से नहीं मिलता। संस्कृत में इसे चित्रक कहते हैं।

चीते दो प्रकार के होते हैं। हमारे देश का चीता वही है, जो मिश्र, लिबिया, मोरक्को, नाइजीरिया, सूडान और सुमालिया के खुले मैदानी जंगलों में पाया जाता है।

चीता, गुल्दार से ऊँचा होता है और इसकी लम्बी टाँगें बिल्ली की तरह नहीं, बल्कि कुछ-कुछ कुत्ते से मिलती हैं। इसके कन्धे की ऊँचाई ३ फुट ३ इंच[1] और वज़न ५० से ६५ किलो तक होता है। खूंटी-नाप ६ फुट ६ इंच से ७ फुट ४ इंच तक होता है, जिसमें पूंछ की लम्बाई २ फुट से २ फुट ६ इंच तक रहती है।

चीते का रंग सुनहरी, गन्दुमी, खाकी व कुछ-कुछ गुल्दार के रंग से मिलता है। नीचे और अन्दर के हिस्से सफेद रहते हैं। नाक के दोनों ओर एक गहरी काली आँसू जैसी धारी आँख से मुंह तक रहती है। चीते के बूटे दूर से तो गुल्दार सरीखे मालूम पड़ते हैं, पर पास से ध्यान से देखने पर इनमें बड़ा अन्तर होता है। इनमें गुल्दार जैसे चांद कहीं नहीं होते। सारे शरीर पर सब बूटे ठोस, काले और घने होते हैं। बाल कड़े और गर्दन झबरी होती है। आँखों की पुतली गोल, कान छोटे और छोटा-सा सिर गोलाई लिए हुए होता है। इसके नाखून कम ढके रहते हैं, और बिल्लियों के नाखूनों की तरह अन्दर पूरी तौर से सिकुड़ नहीं सकते। चीते के पैर और पंजे बहुत-कुछ कुत्तों से मिलते-जुलते हैं।

चीते की लम्बी टाँगें बेमतलब नहीं हैं। इसके बराबर तेज़ दौड़ने वाला कोई और जानवर नहीं है। यह गुल्दार और शेर की तरह रात में दुबक व झपटकर शिकार नहीं करता। यह हिरन और चीतल इत्यादि के पीछे ३-४ मील तक दौड़ उनको थका कर जा दबोचता है। यह दिन में खुले में शिकार खेलता

१. गुल्दार के कन्धे की ऊँचाई ढाई फुट के लगभग होती है।

है। चीते की आँख उसके कान व नाक से तेज़ होती है। अक्सर नर व मादा साथ शिकार करते हैं। पुराने ज़माने में शिकारी लोग इसको कुत्ते की तरह पालते थे, और इसी से हिरन मरवाते थे। बैलगाड़ी में, आँख पर पट्टी बाँध, चीते को ले जाने का रिवाज था। जहाँ हिरन दिखाई दिए वहाँ चीते को गाड़ी से उतार कर उसकी आँखें खोल देते थे। चीता थोड़ी ही देर में हिरन को पकड़ लेता था। चीता ६० से ६५ मील प्रति घंटे की गति (रफ्तार) से भाग सकता है, पर ३-४ मील तक ही, ज़्यादा दूर तक नहीं।

मैसूर के सुलतान टीपू साहब जब लड़ाई में मारे गए, तो उनके शिकार के ५ चीते लार्ड डलहौज़ी को भेंट किए गए। पर, यह शिकार में काम नहीं लाए गए।

शेर और गुल्दारों की तरह चीते भी बहुधा एक ही पेड़ पर अपने नाखून तेज करने जाते हैं। लोग इनको पकड़ने के लिए इन्हीं पेड़ों के पास अपने फन्दे लगाते हैं।

भारत से चीता लुप्त हो गया है। लोगों ने इसे गुल्दार समझ कर मिटा दिया। यह गुल्दार के समान चौकन्ना और होशियार जानवर नहीं है। इसीलिए यह बेचारा नेस्तनाबूद हो गया।[1]

चीता आसानी से पल जाता है। बच्चे २ से ४ तक कोई तीन महीने में होते हैं। पर, चीते चिड़ियाघरों में कम ही बच्चे देते हैं। बच्चों का, पैदा होने पर, रंग नीला सपाट होता है। बूटे बड़े होने पर पड़ते हैं।

जब टीपू साहब लड़ाई में मारे गए तो उनके पाँच चीते लार्ड वेलसली गवर्नर जनरल को भेंट में मिले। लार्ड साहब को इन चीतों से शिकार खेलने का मौका ज़्यादा नहीं मिला।

चीते की दूसरी नसल धारीदार होती है। इसके बूटे नहीं होते। यह मध्य रोडेसिया में पाया जाता है। अभी तक लोगों को इसके बारे में बहुत जानकारी नहीं है।

---

१. आखिरी बार २ चीते हैदराबाद के आसपास १९५१ में देखे गए थे। इसके बाद इनका कोई पता नहीं चला।

जैग्वार

काला गुल्दार

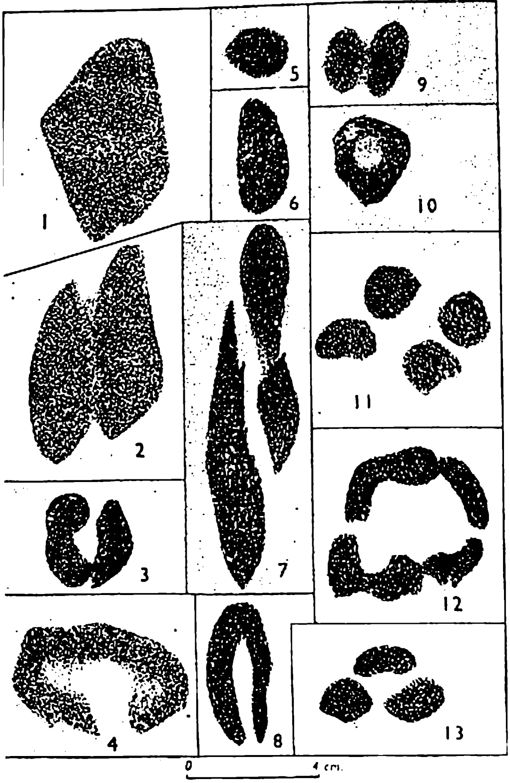
1
2
3
4
5
6
7
8
9
10
11
12
13
0
4 cm.

चीता

गुल्दार — शिकार पर

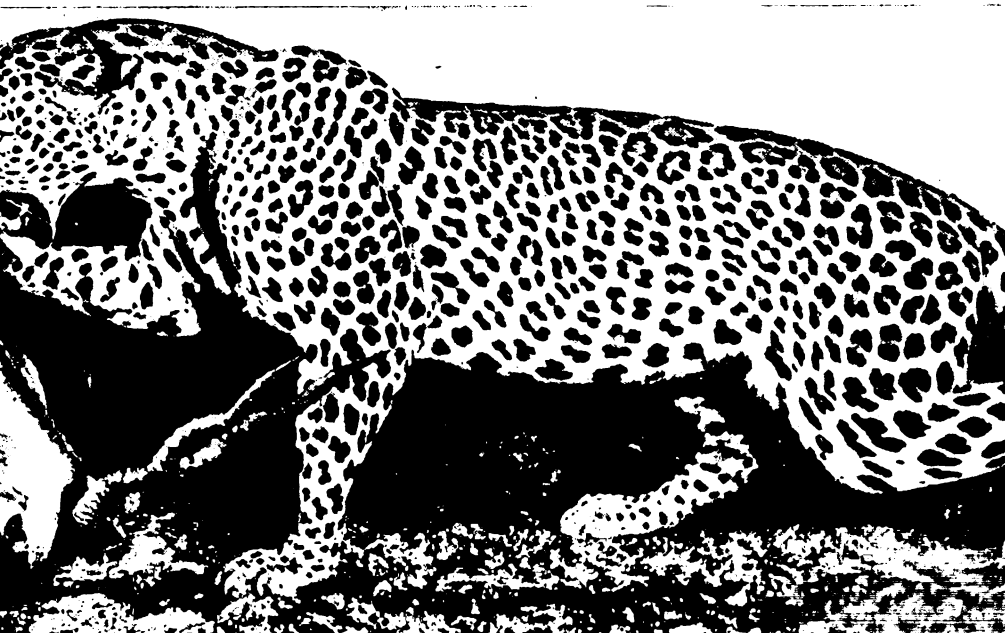

शेर की मौसी—बिल्ली

लकड़बग्घे

चीते द्वारा शिकार

अदूरदर्शी शिकारियों ने अब इस देश में चीते की जाति समाप्त कर दी है। इसलिए अब यदि कोई चीते की सहायता से शिकार करना भी चाहे तो सम्भव नहीं है। किन्तु पाठकों को यह बतलाने के लिए कि चीते से शिकार किस तरह किया जाता था, यहाँ एक शिकार का वर्णन दिया जाता है।

कैप्टेन रूसले (Rousselet) नामक एक फ्रांसीसी-भाषी बेलजियन सन् १८६४ में इस देश में घूमने के लिए आया था। उसने अपनी यात्रा का सचित्र वर्णन प्रकाशित किया था। वह बड़ौदा भी गया था, जहाँ वह तत्कालीन गायकवाड़ महाराज का अतिथि रहा। महाराज उसे अपने साथ एक ऐसे शिकार पर ले गए थे, जिसमें चीते के द्वारा हिरनों का शिकार किया गया था। वह इस प्रकार उसका वर्णन करता है :

"हम लोग इतोला स्टेशन पर उतरे, जहाँ हमें नौकर-चाकर, शिकारी और घोड़े तैयार मिले। हममें से किसी को बन्दूक नहीं दी गई। जब मैंने महाराज से इस बात पर आश्चर्य प्रकट किया, तो उन्होंने दो सुन्दर शिकारी चीतों की ओर इशारा किया। ये शिकार करने के लिए लाए गए थे। प्रत्येक चीता एक अलग पालकी में एक छोटी साँकल से बँधा था और पालकी को चार आदमी ले चल रहे थे। उनकी आँखों पर चमड़े की पट्टी बँधी हुई थी। इतने शोर-गुल में भी वे बिल्कुल शान्त थे। शिकारियों के दो दल हो गए। एक दल महाराज के साथ रहा और दूसरा भाऊ साहब के साथ हो गया। मैं और मेरे साथी श्री शामबुर्ग महाराज के दल में रखे गए, और हम घोड़ों पर सवार होकर उनके साथ हो लिए। हमारे पीछे थोड़े से सिंधी, मराठे और मुसलमान सवार आ रहे थे। हम लोग अपने चीते की पालकी को घेरे हुए चल रहे थे। चारों ओर हिरनों के झुंड दिखलाई पड़ने लगे। इनमें कोई-कोई तो उत्सुकतापूर्वक हमें देखने लगते थे और कोई-कोई हमें देखते ही भाग जाते थे। इस शिकार में इस बात का प्रयत्न किया जाता है कि चक्कर काटकर हिरनों के किसी बड़े झुंड के उस ओर पहुँचा जाए जहाँ से हिरनों की ओर हवा न बह रही हो। यदि शिकारियों की ओर से हवा चल रही हो, तो हिरनों को चीते की गन्ध मिल जाती है और वे तुरन्त भाग खड़े होते हैं। यहाँ के हिरन सवारों से नहीं बिदकते, क्योंकि वे नित्य ही सवारों को आते-जाते देखा करते हैं, और उन्हें इस प्रदेश में कभी

बन्दूक की आवाज भी सुनने का अवसर नहीं मिलता। जब महाराज ने समझा कि हम लोग ठीक मौके पर पहुँच गए हैं तब उन्होंने चीता छोड़ने की आज्ञा दी। हम सब लोग रुक गए। चीते की सांकल खोल दी गई और वह पालकी से उतार दिया गया। उसकी आँखों पर से पट्टी हटा दी गई। वह एक क्षण निस्तब्ध खड़ा रहा, और फिर तुरन्त ही हिरनों के झुंड की ओर लपका। वे उसे आता देखकर भाग खड़े हुए। उसने दो ही तीन छलांगों में एक हिरन को धर दबोचा। सवार तुरन्त ही उसकी ओर भागे। चीता अपने शिकार को पंजों से पकड़े हुए था और उसने अपने दाँत उसकी गर्दन में गड़ा दिए थे। इतने ही में उसका रखवाला उसके पास जा पहुँचा। उसने तुरन्त ही उसकी आँखों पर पट्टी चढ़ा दी, और, कठिनाई से वह उसे हिरन की लाश से अलग कर सका। उसे संतुष्ट करने लिए एक बर्तन में भर कर हिरन का लोहू उसे दे दिया गया। इसके बाद उसे फिर पालकी में चढ़ा दिया गया। इसके बाद हम लोग हिरनों के किसी दूसरे झुंड की खोज में चल पड़े। बड़े आश्चर्य की बात तो यह है कि चीता कभी हिरनी या शावक (बच्चे) को नहीं पकड़ता। वह सदैव झुंड के किसी (नर) हिरन को पकड़ता है। यदि झुंड में एक ही नर हुआ तो भी वह हिरनियों और शावकों को छोड़कर उसे ही धर दबाता है। इस प्रकार कई हिरनों का शिकार करने के बाद चीता थक गया, और अब शिकार में मजा आने लगा, क्योंकि यदि काले हिरन पर हमला किया जाए तो वह सामना करने लगता है और बहादुरी से अपने सींगों से अपने को बचाता है। कभी-कभी तो वह बच निकलता है। अधिक-से-अधिक उसे दो-चार खरोंचे लग जाते हैं। नर हिरन बड़ा शानदार जानवर है। उसके सींग घुमावदार होते हैं और उनकी लम्बाई प्रायः दो फुट होती है। नर की पीठ गहरी काली होती है। यह काली काठी उमर के साथ बढ़ती जाती है और बूढ़े होने पर पेट तक पहुँच जाता है।

५. घरेलू व जंगली बिल्ली

बिल्ली की कोई २५ जातियाँ समस्त संसार में फैली हुई हैं। केवल आस्ट्रेलिया, वेस्ट इंडीज, मेडागास्कर और कुछ द्वीपों में बिल्ली नहीं पाई जाती। बिल्ली कब और कहाँ पालतू हुई, यह तो बताना कठिन है, पर प्राचीन मिश्र (Egypt) में अवश्य लोग बिल्ली पालते थे। बिल्ली भारत में तो सदा से ही गाँवों और शहरों में रहती चली आई है। बिल्लियाँ रंग-बिरंगी होती हैं। बादामी, काली, सफेद, सुनहरी, भूरी, चितकबरी बिल्लियाँ तो अक्सर देखने में आती है। पर जंगलों में, धारीदार व बूटे वाली बिल्लियाँ भी पाई जाती हैं।

आमतौर से बिल्ली की लम्बाई कोई २ फुट और पूंछ सहित ३ फुट होती है। नर का वज़न ४ से ८ किलो तक होता है। मादीन कोई डेढ़ किलो हल्की रहती है। बिल्ली की कन्धे तक ऊंचाई ८ या १० इंच रहती है।

चाहे डील-डौल, रहन-सहन व रंग भले ही भिन्न हो, बिल्लियों के बिल्लीपन में अन्तर नहीं होता। दिन में सोना, रात में शिकार करना, बे-आहट उंगलियों के बल चलना, चाट-चाटकर शरीर को साफ करना, और स्वाधीन जीवन व्यतीत करना, यह बिल्ली के स्वाभाविक गुण हैं। इसके अगले पंजों में ५, व पिछले पंजों में ४ नाखून होते हैं जो चलते समय पीछे को गद्दी में खिंच आते हैं। पूंछ अक्सर लम्बी होती है। आँखें बड़ी व कान खुले रहते हैं। मुंह चपटा, और चेहरा सुहावना होता है। आँख में गोल छेद नहीं बल्कि सीधी धारी रहती है।

बिल्ली क्या कुछ नहीं खाती। जो कुछ हाथ लग जाए, इसको स्वीकार है। कहीं-कहीं तो बिल्लियाँ मछली भी पकड़ लेती हैं। छोटी चिड़ियों, गिलहरी, चूहे इत्यादि बिल्ली के ही लिए बने जान पड़ते हैं। बिल्ली बड़ी आसानी से पेड़ पर चढ़ जाती है। बिल्ली पानी के पास जाना नहीं पसन्द करती।

बिल्ली आदमी पर कभी हमला नहीं करती। यदि अचानक पैर पड़ जाने पर बिल्ली काट ले या पंजा मार दे तो जख्म पुटास लगाने पर जल्द अच्छे हो जाते हैं।

घरेलू पालतू बिल्ली अपनी स्वाधीनता के लिए प्रसिद्ध है। पूंछ खड़ी कर

मालिक से खाना मांगेगी, म्याँऊ-म्याँऊ करेगी, पर खा-पीकर अलग डेरा करेगी। गाँव में बैठकर अक्सर गड़-गड़ाकर अपनी प्रसन्नता का पता देती है। कभी-कभी अपना जिस्म मालिक की टाँगों से धीरे-धीरे घिसने लगती है।

कहा जाता है कि बिल्ली घरेलू जानवर है, पालतू जानवर नहीं। बिल्ली का प्रेम घर से होता है, मालिक से नहीं। एक बार सहारनपुर में एक जज साहब (श्री मण्डल) का तबादला हो गया था। उन्होंने अपनी बिल्ली एक डलिया में रख अपनी मोटर से मेरे घर भेज दी। यह बिल्ली दूसरे दिन सहारनपुर की सड़कों पर घूमती-फिरती न जाने कैसे वापस अपने घर पहुँच गई। जज साहब का बंगला मेरे मकान से कोई दो मील था।

इंगलैण्ड के प्रधान मंत्री, लायड जार्ज ने एक बिल्ली की अपूर्व कहानी लिखी है। महात्मा गांधी एक बार इनसे मिलने चैकर्स गए। महात्मा जी जैसे ही उनके गोल कमरे में जाकर बैठे, एक बिल्ली बाहर से आकर उनकी गोद में कूदकर जा बैठी। जब तक महात्मा जी लायड जार्ज से बातें करते रहे, वह बिल्ली उनकी गोद में बैठी रही। जब वह उठकर चलने लगे तो, बिल्ली भी चली गई। लायड जार्ज ने लिखा है कि आश्चर्य की बात यह थी कि इस बिल्ली को उन्होंने न कभी पहले देखा था, और न कभी बाद में। न जाने कहाँ से वह बिल्ली केवल महात्मा जी की गोद में बैठने के लिए आ गई थी।

बिल्लियाँ अक्सर साल में दो बार बच्चे देती हैं। एक दफे में ५; पर आमतौर पर ४ बच्चे होते हैं, जिनमें मुश्किल से २ बचते हैं। पैदा होते समय बच्चों की आँखे बन्द रहती हैं, और कोई १५ दिन बाद खुलती हैं। माँ ही बच्चों को पालती है। नर कभी पास नहीं फटकता और कभी-कभी अपने बच्चों को मार कर खा जाता है। माँ अक्सर अपने बच्चों को एक जगह से दूसरी जगह अपने मुँह से उनको गर्दन से पकड़कर जा छिपाती है। माँ के पेट में बच्चे कोई दो महीने रहते हैं। माँ बच्चों को ३ महीने तक अपने साथ रखकर छोड़ देती है। बिल्ली की आयु २५ साल के लगभग होती है।

अन्य देशों में कई प्रकार की छोटी-बड़ी बिल्लियाँ होती हैं। इनमें झबरी फारसी बिल्ली, व स्यामी बिल्ली प्रसिद्ध हैं। आश्चर्य की बात यह है कि स्यामी पालतू बिल्ली मैंने स्याम (थाईलैण्ड) में कहीं नहीं देखी।

जंगली बिल्लियों की कई जातियाँ हैं। ये पालतू बिल्लियों से बड़ी होती

हैं। पूर्वी देशों में एक गुल्दारनुमा बिल्ली होती है। दक्षिण में कत्थई बूटेदार बिल्ली जंगलों में मिलती है। मछली मारने वाली बिल्लियाँ भी कहीं-कहीं नदियों के किनारे पाई जाती हैं। नैपाल और असम में बादली गुल्दार की तरह बिल्ली होती है। यहाँ के जंगलों की सुनहरी बिल्ली बड़ी प्यारी व सुन्दर होती है। इसका शरीर सपाट-सुनहरा होता है, और मुंह पर धारियाँ रहती हैं।

धोखा, चोट, खतरे इत्यादि की याद बिल्ली को कम रहती है। एक बार एक पालतू काली बिल्ली पर मेरा पैर पड़ गया। मेरे बोझ से बेचारी बिल्ली दब गई। बड़े जोर से चिल्लाई और घबराकर जो उठी, तो मेरा पैर उसके पंजे पर जा पड़ा। मुझे काटकर, अपने को छुड़ाकर भाग गई। उसी दिन ठीक चार बजे चाय के वक्त वापिस आकर रोज़ की तरह दूध पीने को माँगने लगी। उसको जो चोट लगी थी उसे, और जिससे चोट लगी थी उसे वह बिलकुल भूल गई। कई दिनों तक पंजा उठाकर चलती रही, पर मुझे देखकर कोई डर उसको नहीं लगता था, न मुझसे बचने की ही कोशिश करती थी। यही नहीं, जहाँ पर उसके ऊपर मेरा अकस्मात पैर पड़ गया था, ठीक वहीं आकर फिर बैठने लगी।

६. लकड़-बग्घा

लकड़-बग्घा (Hyaena) का कोई सम्बन्ध बिल्ली के खानदान से नहीं है। यहाँ पर केवल इसलिए इस जानवर का ज़िक्र किया गया है, क्योंकि अक्सर यह आदमी के बच्चों को उठा ले जाता है। आदमखोर लकड़-बग्घों का हाल अक्सर अखबारों में छपता रहता है।

हमारे देश में, पश्चिमी एशिया में, अफगानिस्तान और टर्की इत्यादि में धारीदार लकड़-बग्घा पाया जाता है। भूरा-लकड़-बग्घा दक्षिणी अफ्रीका, रोडेशीआ और मोजमबीक में होता है।

धारीदार लकड़-बग्घा समस्त भारत में मिलता है। ऐसा भद्दा, बेहूदा, कायर और बद-शक्ल शायद ही कोई और जानवर हो। जरा से खटके से दुम दबाकर भाग जाता है।

इसका खूंटी-नाप ४ फुट से ५ फुट तक होता है, जिसमें पूंछ की लम्बाई कोई फुट-भर होती है। वज़न २७ से ५४ किलो तक रहता है। इसके बाल कड़े व दस-बारह इंच लम्बे होते हैं, गर्दन झबरी होती है। रंग भदमैला, गहरा-गेंहुआ और गर्दन व टांगों पर काली धारियां होती हैं। पैर तो बिलकुल ही काले होते हैं।

आगे व पिछले पैरों में ४ नाखून होते हैं। इसके अगले पैर के निशान, पिछले पैर के निशानों से बड़े होते हैं; और कुत्तों के पैर के निशानों से आसानी से पहचाने जाते हैं। पूंछ के पीछे, एक थैली-सी लगी रहती है। लकड़बग्घा, कुत्तों से काफी मिलता-जुलता है, मगर उनके घराने का नहीं है।

लकड़-बग्घा दिन में चट्टानों, पहाड़ी खोहों इत्यादि में पड़ा सोता रहता है। दिन ढले शिकार की तलाश में निकलता है। गाँवों के कुत्ते अक्सर इसको भोंक-कर भगा देते हैं। यह अपना दाँव देखकर रात में शिकार खेलता है। कोई मरा जानवर मिल जाए तो उसे बड़े चाव से खाता है। अगर गोश्त गिद्ध व और जानवर खा गए हों तो हड्डियां ही चबाकर रह जाता है। कभी-कभी भेड़-बकरी व आदमी के बच्चे भी मार लेता है।

हरिद्वार के पास एक मर्तबा मैं बकरी बांधकर गुल्दार का इन्तजार कर

रहा था। थोड़ी देर बाद क्या देखता हूँ कि गुल्दार की जगह धीरे-धीरे पैर फूंक-फूंककर रखता हुआ लकड़-बग्घा चला आ रहा है। मैंने इसको नहीं मारा, क्योंकि इसकी खाल किसी काम की नहीं होती।

एक बार राजा साहब गतपुरवा ने पीलीभीत में एक लकड़-बग्घा मारकर मोटर के पीछे रखा और बांधने के लिए रस्सी निकाल रहे थे कि लकड़-बग्घा एकाएक कूद पड़ा, और ऐसा भागा कि फिर उसका पता न चला।

एक ब्यांत में उसके २ से ४ बच्चे होते हैं। वे लगभग ३ महीने मां के पेट में रहते हैं। कहा जाता है कि लकड़-बग्घे की उम्र कोई २५ साल की होती है। शिकारी लोग इसे कम मारते हैं। लकड़-बग्घे को जंगल का मेहतर समझो। गोश्त, हड्डी, गोबर इत्यादि सभी सफाचट कर जाता है। अफ्रीका में गांव की दीवारों में लोग लकड़-बग्घे के आने-जाने के लिए रास्ता बना देते हैं। रात में आकर लकड़-बग्घे गांव का कूड़ा-करकट साफ कर जाते हैं।

● ●

भारत—देश और लोग माला

<u>प्रकाशित पुस्तकें</u>

१. **फूलों वाले पेड़ :** ले. डा. एम. एस. रन्धावा । अनु. सूर्य कुमार जोशी । हमारे देश के फूलों वाले पेड़ों का रोचक और शिक्षाप्रद वर्णन । ५५ चित्र (१४ चित्र रंगीन) डिमाई अठपेजी । पृ. सं. २०६

सामान्य प्रति ६.५० सजिल्द प्रति ९.५०

२. **असमिया साहित्य :** ले. प्रो. हेम बरुआ । अनु. सुमंगल प्रकाश । असमिया साहित्य का प्राचीन काल से आज तक का इतिहास । डिमाई अठपेजी । पृ. सं. ३१८

सामान्य प्रति ५.०० सजिल्द प्रति ७.५०

३. **कुछ परिचित पेड़ :** ले. डा. एच. सन्तापाऊ । अनु. डा. सुधांशु कुमार जैन । भारत के सामान्य वृक्षों के सम्बन्ध में रोचक जानकारी । डिमाई अठपेजी । पृ. सं. १४६

सामान्य प्रति ४.०० सजिल्द प्रति ७.५०

४. **भारत के खनिज पदार्थ :** ले. मेहर डी. एन. वाडिया । सम्पादक डा. डी. एन. वाडिया । अनु. श्रीयांश प्रसाद जैन । भारत के खनिज तथा धातुओं सम्बन्धी रोचक जानकारी ।

अन्य विवरण के लिए लिखें :

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

२३ निजामुद्दीन पूर्व, नई दिल्ली-१३

24502
14-5-68

श्री मनोहरदास चतुर्वेदी आई० एफ० एस० (अवकाश प्राप्त) भारत के चोटी के वन-विज्ञान विशारद हैं। इलाहाबाद विश्वविद्यालय में शिक्षा प्राप्त करने के बाद आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में उन्होंने अपनी उच्च शिक्षा पूरी की जहाँ वे १९२० से १९२३ तक रहे। इसके बाद उन्होंने भारत की इंडियन फारेस्ट सर्विस में प्रवेश किया। यहाँ अपनी योग्यता तथा मौलिक सूझबूझ के कारण वे बराबर उन्नति करते गए और अन्त में १९५४ में भारत के इन्सपेक्टर जनरल आव फारेस्ट्स के सर्वोच्च पद से उन्होंने सेवा से निवृत्ति प्राप्त की। किन्तु उनकी योग्यता का लाभ उठाने के लिए राष्ट्रसंघ की "फूड एण्ड एग्रिकल्चर आर्गेनाइजेशन" ने उन्हें अपने यहाँ बुला लिया। वे सीरिया में वन-सलाहकार होकर गए। वहाँ उन्होंने उस देश के वन-विभाग को आधुनिक ढंग से संगठित किया। फिर फूड एण्ड एग्रिकल्चर आर्गेनाइजेशन का जो मिशन कांगो भेजा गया, उसके प्रधान नियुक्त हुए। वहाँ तीन वर्ष तक उन्होंने अत्यन्त उपयोगी सेवा की।

श्री चतुर्वेदी बहुमुखी प्रतिभा के व्यक्ति हैं। वह बहुत अच्छे खिलाड़ी और शिकारी भी हैं। वन के पशुओं का उन्होंने अत्यन्त गहन और सूक्ष्म अध्ययन किया है। उनसे उन्हें अकृत्रिम प्रेम है। इन्हें यह जानकर अत्यन्त दुःख हुआ कि भारत के वनों के कितने ही पशुओं की नस्ल ही समाप्त हो जाने के खतरे में है। इसलिए उन्होंने शिकार करना छोड़ दिया है और अब 'वन-जीवन संरक्षण' के काम में लग गए हैं। भारत की 'वाइल्ड लाइफ प्रिजर्वेशन' संस्था के वे प्रा... इन्स्पेक्टर जनरल ऑफ फारेस्ट्स थे तब ... जनरल श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी को इन... कहानी बतलाई, और उनकी सहमति से दे... सेक्चुअरी (शरण-स्थान) स्थापित किया जिस... रहते हैं और उसमें शिकार नहीं खेला जा सकता।

Library IIAS, Shimla
H 639.5 C 392 S
24502